केरल ज्योति

अप्रैल 2024

ISSN 2320-9976
UGC Care - List

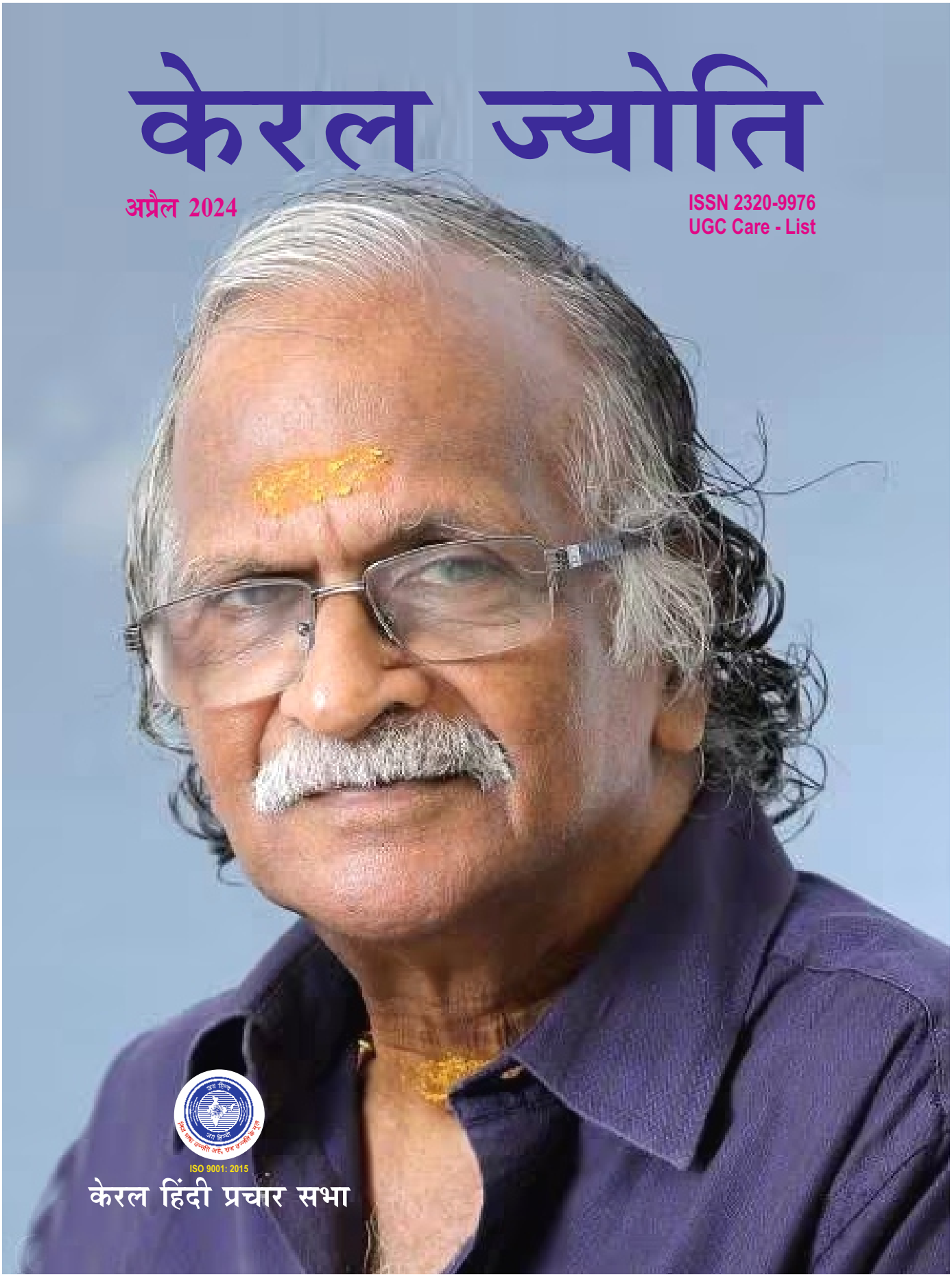

ISO 9001: 2015

केरल हिंदी प्रचार सभा

केरल हिंदी प्रचार सभा का
वार्षिक आम सभा में मंत्री भाषण कर रहे हैं।

आम सभा के विविध दृश्य

केरलज्योति

केरल हिंदी प्रचार सभा की मुख पत्रिका

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय की वित्तीय सहायता से प्रकाशित)

केरल हिंदी प्रचार सभा के संस्थापक

स्व. के वासुदेवन पिल्लै

पूर्व समीक्षा समिति

प्रो (डॉ) एन रवींद्रनाथ

डॉ के एम मालती

प्रो(डॉ) आर जयचन्द्रन

प्रो (डॉ) जयश्री एस आर

परामर्श मंडल

डॉ तंकमणि अम्मा एस

डॉ लता पी

डॉ रामचन्द्रन नायर जे

प्रबन्ध संपादक

गोपकुमार एस (अध्यक्ष)

मुख्य संपादक

प्रो डी तंकप्पन नायर

संपादक

डॉ. रंजीत रविशैलम

संपादकीय मंडल

अधिवक्ता मधु बी (मंत्री)

सदानन्दन जी

मुरलीधरन पी पी

प्रो रमणी वी एन

चन्द्रिका कुमारी एस

एल्सी सामुवल

आनन्द कुमार आर एल

प्रभन जे एस

डॉ नेलसन डी

सूचना : लेखकों द्वारा प्रकट किये गये मत उनके अपने हैं। उनसे संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

पुष्प : 61 दल : 1 अंक: **अप्रैल 2024**

अनुक्रमणिका

संपादकीय 5

श्रद्धेय श्रीकुमारन तंपीजी शतभिषिक्त हुए !–**अधिवक्ता (डॉ.) मधु.बी** 6

भारतीय समाज एवं संस्कृति में किन्नर – **डॉ.जयश्री.एस.टी.** 7

शेखर एक जीवनी और खसाक्किन्टे इतिहासम – अस्मिता की खोजयात्रा पर एक तुलनात्मक पाठ – **डॉ बिन्दु एम जी** 9

समकालीन हिंदी उपन्यासों में दलित विमर्श – **डॉ. सफीना.एस.ए.** 13

प्रवासियों की आर्थिक समस्याएँ : एक अवलोकन – **डॉ. सपना सैनी** 15

दलित कहानियों में चित्रित दलित स्त्री की अभिव्यक्ति **अरुणिमा ए.एम** 19

गिरमिटिया देशों में हिंदी – **डॉ.प्रीती.एस** 21

साम्प्रत समय में रिश्तों का पोषण – **भीखालाल नाथजीभाई प्रजापति** 24

मुस्कराना भूल गई (कविता) – **गोपिका.एम.आर** 27

वीरांगना झलकारी बाई उपन्यास में राष्ट्रीय चेतना – **सुधा.जे** 28

मेहरून्निसा परवेज के उपन्यास साहित्य में समाजिक परिवेश **ममता टंडन** 30

शिक्षा के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन – **ब्रिजेशकुमार बी. चौधरी** 35

समकालीन हिंदी दलित कहानियों में नारी जीवन – **डॉ. आर्या.वी.एस** 38

हिंदी कहानियों में दिव्यांग विमर्श – **डॉ.रम्या जी एस नायर** 42

राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का सचः नई कहानी के संदर्भ में - **डॉ. सिन्धु जी नायर** 45

गरज बावली (कविता) – **डॉ.बाबू.जे** 49

संत्रस्त पात्रों का चित्रण उषा प्रियंवदा की कहानियों में-**डॉ.लेखा.पी** 50

मृदुला गर्ग की कहानियों में नारी विमर्श - **डॉ. षेर्लिन** 52

'पट्टिनत्तार' (काव्य) **मूल : पी.रविकुमार, अनुवाद : प्रो.डी. तंकप्पन नायर** 55

प्रश्नोत्तरी - **डॉ.रंजीत रविशैलम** 58

मुखचित्र : मलयालम के प्रमुख कवि एवं फिल्मी गीतकार और शताभिषिक्त श्री श्रीकुमारन तंपी

लेखकों से निवेदनः

• हिन्दी और इतर भारतीय भाषाएँ, साहित्य, संस्कृति आदि पर लिखी गयी उच्च स्तरीय मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ आमंत्रित हैं। • भाषा, साहित्य, संस्कृति आदि पर आयोजित समारोहों, चर्चाओं, संगोष्ठियों के समाचारों का भी स्वागत है। इन समाचारों को प्रस्तुत करनेवाले का नाम और पूरा पता भी लिख भेजें। • भारतीय भाषाओं से अनूदित कविता, कहानी भी भेजें। उनके साथ मूल लेखक से प्राप्त अधिकार पत्र भी प्रेषित करें। • प्राकाशनार्थ रचनाएँ साफ-साफ अक्षरों में लिखकर अथवा टंकित कर या **डी.टी.पी.** करके **सी.डी.** में भेजें। कृपया कार्बन प्रति न भेजें। • स्वीकृत रचनाएँ यथासमय पत्रिका में प्रकाशित की जाएँगी। • आप ई-मेल द्वारा भी अपनी रचनाएँ भेज सकते हैं। ई-मेल में Microsoft Word or Pagemaker फाइल में भेजिए। ई-मेल आईडी :khpsabha12@gmail.com • अपनी रचना के साथ पूरा पता (जिला, राज्य और पिनकोड सहित), लघु परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक, 'केरल ज्योति', केरल हिन्दी प्रचार सभा,
तिरुवनन्तपुरम-695 014

सभा का मुख्यालय और उसकी गतिविधियाँ

केरल की राजधानी तिरुवनंतपुरम के वषुतक्काड़ में सभा का मुख्यालय स्थित है। सभा के मुख्य परिसर में सभा के संस्थापक मंत्री की पावन स्मृति में श्री वासुदेवन पिल्लै स्मारक हिंदी ग्रंथालय, स्नातकोत्तर अध्ययन अनुसंधान केंद्र, साहित्याचार्य महाविद्यालय, केंद्रीय हिंदी महाविद्यालय, टंकण और आशुलिपि संस्थान, परीक्षा भवन, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, राष्ट्रज्योति पब्लिशेर्स के प्रकाशन अधिकारी का कार्यालय, हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड़) और केरल विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त शोध केंद्र हैं।

विज्ञापन दर (साधारण अंक)

	मासिक	वार्षिक
आवरण पृष्ठ 4 (रंगीन)	रु.2500.00	25,000.00
आवरण पृष्ठ 2 एवं 3 (रंगीन)	रु.2000.00	20,000.00
साधारण पृष्ठ पूरा	रु.1000.00	10,000.00
साधारण पृष्ठ 1/2	रु.600.00	6,000.00
साधारण पृष्ठ 1/4	रु.350.00	3,500.00

एक प्रति का मूल्य रु. 25/- आजीवन चंदा : रु. 2500/- वार्षिक चंदा : रु. 250/-

A /c No. 57022786007 IFS Code : SBIN0070033
State Bank of India, Vazhuthacaud Branch

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, वषुतक्काडु, तिरुवनन्तपुरम-695 014.
दूरभाष:0471-2321378, 2329200, 2329459. फैक्स:0471-2329200 ई-मेल : khpsabha12@gmail.com

दूरभाष : 0471-2321378, 2329200, 2329459
फैक्स : 0471-2329459
मोबाईल : मुख्य संपादक : 9995680289 संपादक : 7898515222
E-mail : khpsabha12@gmail.com
Website : www.keralahindipracharsabha.com

केरलज्योति
सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
अप्रैल 2024

संपादकीय

स्व. कुमारजी की स्मृति में श्रद्धा सुमन

राष्ट्रभाषा के सच्चे सेवक एवं श्रेष्ठ प्रचारक कुमारजी का निधन केरल के समस्त हिंदी प्रेमियों के लिए दुखद समाचार रहा है। स्वभाव से मृदुभाषी और मिलनसार होने के कारण उन्होंने केरल हिंदी प्रचार सभा के प्रचारकों तथा हिंदी प्रेमियों का स्नेह व सम्मान पाया। 26 फरवरी 2024 को वे दुनिया से बिदा हो गए। उनकी उम्र 98 वर्ष थी। उनका वास्तविक नाम के. सुकुमारन है। किंतु लोगों ने स्नेहादर से उन्हें कुमार जी पुकारते थे और पूरे केरल में और केरल के बाहर भी कुमार जी नाम से ही वे अभिहित होते थे। उनका संपूर्ण जीवन राष्ट्र और राष्ट्रभाषा को समर्पित था। जब पट्टम ताणुपिल्लै जी केरल के मुख्यमंत्री रहे थे तब कुमारजी ने सन् 1948 में तिरुवनंतपुरम जिले में नेमम् में आज़ाद हिंदी पाठशाला नाम से एक हिंदी विद्यालय स्थापित किया था जिसका बाद में आज़ाद हिंदी कॉलेज के रूप में पुनः नामकरण हुआ। उनकी शिष्य संपदा करीब दो लाख की थी और 2018 तक उन्होंने हिंदी अध्यापन जारी किया था। एक निष्ठावान हिंदी प्रचारक, सुयोग्य अध्यापक, कुशल संगठक तथा सच्चे हिंदी प्रेमी के रूप में वे लब्धप्रतिष्ठ हुए हैं। एक लंबे अर्से तक वे केरल हिंदी प्रचार सभा के उपाध्यक्ष रहे और इसके अलावा नेमम् में स्थापित स्वराज ग्रंथशाला के स्थापक उपाध्यक्ष भी रहे।

अपने हिंदी प्रचार के प्रारंभ काल में हिंदी प्रचार के भाग के रूप में उन्होंने जम्मू कश्मीर को छोडकर भारत के अधिकतर राज्यों की यात्रा की। उन्हें अपनी विशिष्ट सेवाओं के लिए कई पुरस्कार भी मिले हैं। सन् 1992 में उन्हें पूर्व राष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा से श्रेष्ठ हिंदी प्रचारक का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। इसके अलावा वे दिल्ली के अखिल भारत हिंदी संस्था संघ, अलाहाबाद हिंदी साहित्य सम्मेलन और बिहार के देवघर हिंदी प्रचार सभा से भी पुरस्कृत हुए हैं। उनकी पत्नी भी हिंदी सेवी महिला है जिन्हें हिंदी में पीएच.डी. प्राप्त है और कई साल केरल हिंदी प्रचार सभा द्वारा संचालित हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड) में प्राध्यापक रहे। उनकी पत्नी डॉ. विजयम्मा, पुत्र के.बी. विजयकुमार तथा पुत्रवधू शशिकला को कुमारजी के चिर वियोग को सहने की शक्ति भगवान प्रदान करें। कुमारजी की मृत्यु के कुछ दिनों पहले केरल हिंदी प्रचार सभा के मंत्री अधिवक्ता डॉ. मधु.बी. ने उनके घर जाकर उनके प्रति सभा का आदर प्रकट किया। केरल ज्योति परिवार उनके प्रति स्नेहादर सूचक श्रद्धा सुमन समर्पित करता है।

प्रो.डी.तंकप्पन नायर
डॉ.रंजीत रविशैलम

श्रद्धेय श्रीकुमारन तंपीजी शताभिषिक्त हुए!

अधिवक्ता (डॉ.) मधु.बी

विगत 16 मार्च को श्रीकुमारन तंपीजी शताभिषिक्त हुए। आपका जन्म 16 मार्च 1940 को आलप्पुष़ा जिले के हरिप्पाड में पिताश्री स्व. कलरिक्कल कृष्णपिल्लै एवं माताश्री स्वर्गीया. करिमपलयत्तु भवानी अम्मा तंकच्ची के सुपुत्र के रूप में हुआ था।

तंपीजी केशताभिषेक समारोह में आदरणीय डॉ सोमनाथ जी भाषण दे रहे है

कवि, गीतकार, उपन्यासकार, सिनेमा पटकथाकार, निदेशक, निर्माता आदि रूपों में आपकी चहुँ ओर अप्रतिम ख्याति है। सिनेमा संबंधी पुस्तक 'कणक्कुम कवितयुम्' के लिए केंद्रीय सरकार पुरस्कार, जेसी डानियल राज्य सरकार पुरस्कार, वल्लत्तोल पुरस्कार, वयलार पुरस्कार सहित दो सौ से अधिक श्रेष्ठ पुरस्कार आपको प्राप्त है। ध्यातव्य है कि सन् 2019 में केरल हिंदी प्रचार सभा ने सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार 'साहित्यकलानिधि' प्रदान कर तंपीजी को सम्मानित किया। श्रीकुमारन तंपी जी की आत्मकथा 'जीवितं ओरु पेंडुलम' के नाम से 'मातृभूमि बुक्स' द्वारा मलयालम भाषा में प्रकाशित हैं। आपकी कविताओं का हिंदी अनुवाद ख्यातिप्राप्त भाषाविद् डॉ.पी. लता ने किया है और आपके उपन्यास 'कुट्टनाटु' का 'उम्मीद' शीर्षक से अनुवाद केरल हिंदी प्रचार सभा की मुखपत्रिका 'केरलज्योति' के संपादक डॉ.रंजीत रविशैलम ने किया है। आज भी अपने कर्मक्षेत्र में विराजमान् कर्मयोगी शताभिषिक्त श्रीकुमारन तंपीजी को समूचे केरल हिंदी प्रचार सभा परिवार का हृदयंगम अभिनंदन।

मंत्री, केरल हिंदी प्रचार सभा

भारतीय समाज एवं संस्कृति में किन्नर

डॉ.जयश्री.एस.टी.

समाज में जब कोई शिशु जन्म लेता है, तब समाज के लोगों की प्रथम प्रतिक्रिया यह जानने की होती है कि जन्म लेनेवाला शिशु बालक है अथवा बालिका। लेकिन शिशु का लिंग बोध नहीं हो पाता है तो समाज द्वारा उस बच्चे को किन्नर या हिजड़ा घोषित कर दिया जाता है।

मानव जाति के एक ऐसे रूप को किन्नर कहते है जो लैंगिक रूप से तो नर अर्थात पुरुष होते और न ही स्त्री। इनका प्रजनन अंग अविकसित होता है। हिमालय की कन्नौर क्षेत्र में किन्नर नाम की एक जाति भी रहती है। जिनकी भाषा कन्नौरी है। ऐसी मान्यता है कि 'हिजड़ा' उर्दू का शब्द है जब कि 'किन्नर' हिंदी शब्द है। तेलूगू में इसे नपुसंकुडु तमिल में थिरुनंगाडू, जुगरात में पवैय्या, पंजाब में ख़ुसरा एवं कर्नाटक में जोगप्पा कहते है। वर्तमान में इसे थर्डजेंडर कहा जाता है।

किन्नर हिमालय के क्षेत्रों में बसनेवाली एक मनुष्य जाति का नाम है, जिसके प्रधान केंद्र हिमवत और हेमकूट थे। पुराणों और महाभारत की कथाओं एवं आख्यानों में तो उनकी चर्चाऐं प्राप्त होती हैं। कादंबरी जैसे कुछ साहित्यक ग्रंथ में भी उनके स्वरूप, निवास क्षेत्र और क्रिया कलापों के वर्णन मिलते है। किन्नर हिमालय में आधुनिक कन्नौर प्रदेश के पहाड़ी लोग, जिनकी भाषा कन्नौरी, गलचा,लाहौली आदि बोलियों के परिवार की है।"[1] उनके नाम से स्पष्ट है , उनकी योनि और आकृति पूर्णताः मनुष्य की नहीं मानी जाती।

महाकवि कालिदास ने अपने अमर ग्रंथ 'कुमारसम्भव' में किन्नरों का मनोहारी वर्णन किया है जिसका हिंदी अनुवाद है- "जहाँ अपने नितम्बों और दुर्वह भार से पीडित किन्नरियाँ अपनी स्वाभाविक मंदगति को नहीं त्यागती यद्यपि मार्ग, जिसपर शिलाकर हिम जम गया और उनकी अंगुलियों और एड़ियों को कष्ट दे रहा है।"[2] पुराणों में किन्नरों को दैवी गायक कहा गया है। वे कश्यप की अमतं है और हिमालय में निवास करते हैं। वायुपुराण के अनुसार -"किन्नर अश्वमुखों के पुत्र थे। उनके अनेक गण थे और गायन और नृत्य में पारंगत थे। हिमालय में स्थित अनेक स्थान पर किन्नरों के लगभग सौ शहर थे।"[3]

भारतीय समाज में किन्नर सामुदाय का अस्तित्व सदैव रहा है प्राचीन धार्मिक महाकाव्यों में भी किन्नर समुदाय का उल्लेख मिलता है। वैदिक काल तथा पौराणिक साहित्यों में इस वर्ग को हरितीय प्रकृति अर्थात 'नपुंसक लिंग' के रूप में सम्बोधित किया गया है। महाभारत में - शिखंडी किन्नर था अर्जुन ने वृहंन्नला नामक किन्नर का वेष धारण कर विराट नगर में अज्ञातवास का अंतिम वर्ष पूर्ण किया था। जुगरात के किन्नर अर्जुन के वृहन्नला रूप की पूजा करते और यहाँ के बहुचर देवी के मंदिर में किन्नर बनने के इच्छुक लोग आते रहते हैं। बहुचर किन्नरों की इष्ट देवी है। आंध्रप्रदेश में किन्नर समुदाय को शिव-शक्ति के नाम से सम्बोधित किया जाता है, ये स्वयं को भगवान शिव से विवाहित मानते हैं। इनके हाव भाव स्त्रियों जैसे होते हैं। ये आमतौर पर कार्य करते हैं।

देश के विभिन्न स्थानों में ये छोटे -छोटे समुदायों के रूप में रहते हैं। ये समाज के हाशिए पर रहनेवाले बिलकुल अलग समुदाय है। स्त्री-पुरुष की पहचान से भिन्न अपनी पहचान रखने के कारण समाज अपनी सामाजिक, आर्थिक, संस्कृतिक आदि गतिविधियों में इनको सम्मिलित नहीं करता है। जिसके कारण किन्नर समुदाय ने अपनी अलग भाषा, विशेष सामाजिक यंत्र तथा अलग प्रकार की लैंगिक गतिविधियाँ विकसित कर ली हैं। समाज द्वारा किया गया भेदभाव इनके जीवन को चुनौतीपूर्ण बनाता है। किसी मंदिर में इनके लिए विधिवत पूजा का कोई प्रावधान नहीं है, इसलिए इनकी ईश आराधना एवं पूजा कार्य अपने घर तक ही सीमित होते है इनकी प्रथाएँ एवं अनुष्ठान लगभग गोपनीय होते हैं। जन्मजात किन्नरों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है इन्हें 'बुचरा' कहा है, नकली किन्नर 'अबुआ' कहलाते हैं।

प्रदीप सौरभ के उपन्यास 'तीसरी ताली' का

समीक्षात्मक विश्लेषण करते हुए डॉ. हेमंत कुमार कहते हैं कि - तीसरी योनी के लोग समाज की खुशियों में शामिल होते हैं, बधाइयाँ देते आय और नेग लेते है लेकिन इनके आलावा भी उनका अपना समाज है यानी संस्कृति एवं रीति-रिवाज़ है जिनके विषय में लोगा कम ही जानते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में इनकी संस्कृति व रीति -रिवाज़ एवं गुरु -शिष्य परंपरा को केंद्र में रखा गया है, इनमें किन्नरों के पवित्र स्थल कूवागम (तमिलनाडु) व उससे जुडी परम्पराओं का विस्तार से वर्णन किया गया है।

तमिलनाडु में स्वयं को थिरु नंगाई मानते है और 'अरुवानी' कहलाना पसंद करते हैं तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले के कुवांगम गाँव के कुथांडावार मंदिर परिसर में प्रत्येक वर्ष के अप्रैल -मई माह में 18 दिन 'कुथांडावार महोत्सव मनया जाता है, जिसमें सम्मिलित होने के लिए देश-विदेश से हज़ारों की संख्या में किन्नर पहुँचते है। सारे किन्नर अरावान देवता व्याह रचाते हैं, रातभर गाना होता है और अगले दिन सुबह-सवेरे अरावन की बलि चढाने के बाद उनकी मृत्यु का शोक मनाते हैं, अपनी चूड़ियाँ फोड़ते है, इस महोत्सव में किन्नरों के मध्य सौंदर्य प्रतियोगिताएँ गायन व नृत्य प्रतियोगिताएँ गायन व नृत्य प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं।

महेंद्र भीष्म की रचना 'किन्नर कथा' के अनुसार केरल में आयप्पा और चामय्या बिल्कु उत्सव, कर्णाटक में येल्लमा देवी उत्सव एवं गुजरात में माँ बहुचर देवी इस मंदिर में नवरात्र भर डांडिया, गरबा, नृत्य- गायन व अन्य रंगारंग कार्यक्रम होते रहते हैं। इसी स्थान पर अर्जुन ने हिजड़ा रूप धरा था वृहंन्नला कहलाये थे तभी से ही माँ बहुचर देवी के मंदिर का अस्तित्व माना जाता है, जो किसी को भी हिजड़ा रूप या लिंग परिवर्तन करा देने की शक्तिरखती है इसलिए यहाँ स्वेच्छा से हिजड़ा बनाने की इच्छा रखने वाले आते रहते हैं ।

सन् 1871 में ब्रिटिश सरकार ने इनपर प्रतिबंध लगाए क्योंकि ब्रिटिश विरोधी आंदोलन में इनकी भूमिका थी। स्वतंत्रता के पश्चात् इन पर प्रतिबंध हटा लिया गया। 2009 ई में भारत सरकार निर्वाचन सूची व मतदाता पहचान पत्र में इन्हें 'अन्य' के रूप में उल्लेख किया तथा 15 अप्रैल 2015 को सुप्रीमकोर्ट ने इनके अधिकारों परमान्यता दी एवं सभी आवेदनों में तीसरे लिंग का उल्लेख अनिवार्य कर दिया।साथ ही बच्चा गोद लेने एवं चिकित्सा के माध्यम से पुरुष या स्त्री बनने का भी अधिकार दे दिया।

2018 ई में सुप्रीम कोर्ट ने धारा 377 हटाकर इन्हें व्यापक अधिकार प्रदान किए। भारत वर्ष में कुल 450 गुरुधाम है, सम्पूर्ण देश में 14-15 लाख किन्नर हैं जिसमें से जन्मजात किन्नरों की संख्या 400 के आस-पास है शेष स्त्रैण स्वभाव के हिजड़े बने हुए हैं। भारतवर्ष में 'मनसा' और 'हंसा' किन्नर अधिक हैं जबकि 'बुचरा' यानि पैदाइशी सबसे कम है, लिंगच्छेदन कर बने गए किन्नरों को छिबरा और नकली किन्नर बने मर्दों को अबुआ कहते हैं। किन्नरों को मुख्य रूप से 4 वर्गों में विभक्त किया जाते हैं -बुचरा, नीलिमा, मनसा, हंसा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामान्य इंसानों और किन्नरों के रहन-सहन, व्यवहार, संस्कार बहुत ही अलग आय खाई की तरह है, जिसको पढ़ना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। सामाजिक परिवेश में किन्नर का कार्य मनोरंजन करके जीविकोपार्जन करना था। यद्यपि प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज में इन्हें कोई विशेष अधिकार प्राप्त नहीं था लेकिन वर्तमान भारत सरकार ने इन्हें कई सामाजिक, आर्थिक, एवं राजनीतिक अधिकार प्रदान किए तो इस दिशा में सुधार हो सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. नागरी प्रचारणी सभा द्वारा 12 खंडों में प्रकाशित हिंदी विश्वकोश (1963) के तीस खंड से, पृःसं -8
2. महाकवि कालिदास, कुमारसम्भव, प्रथम सर्ग, श्लोक 11-1
3. वायुपुराण

सहायक ग्रंथ

1. कथा एवं किन्नर - विजयेंद्र प्रताप सिंह, 2003
2. किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म, हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2018
3. किन्नर देश में -राहुल सांकृत्यायन, इलाहबाद, 2001
4. हिंदी विश्वकोश - नागरी प्रचारणी सभा, 1963

सहायक आचार्य
के एस एम डी बी कॉलेज
शास्ताम्कोट्टा, कोल्लम, केरल

शेखर एक जीवनी और खसाक्किन्टे इतिहासम - अस्मिता की खोजयात्रा पर एक तुलनात्मक पाठ

डॉ बिन्दु एम जी

श्रेष्ठ रचना की सबसे बडी पहचान वही है जहाँ वह समय की कसौटी पर खरा उतरे और उसका विषय समय समय पर पाठक के लिए नया बनता रहें। प्रकाशित रचना सार्वजनिक है। रचनाकार का जितना अधिकार उसपर है उतना या उससे बढकर अधिकार पाठक का भी है। पढनेवाला एक साथ पाठक और आलोचक है। रचना का मूल्यांकन पाठक के लिए आकर्षण की वस्तु है। साहित्यिक रचना का मूल्यांकन उतना सरल कार्य नहीं है। रचना का वस्तुनिष्ठ अध्ययन, रचनाकार के मूल्यबोध की तहत अपनी बौद्धिक शक्ति को प्रतिष्ठित करना आलोचक के लिए अनिवार्य है। तुलनात्मकता के धरातल पर आकर आलोचना का कार्य और भी जटिल हो जाता है।

साहित्य जगत में तुलनात्मक आलोचना एक निरंतर चलती प्रक्रिया है। हर क्षेत्र में वैरुध्य को देखना मनुष्य का सहज स्वभाव है। साहित्यालोचना के क्षेत्र में यह कार्य निरंतर ज़ारी रहता है। वैरुध्यात्मकता को एक तुले पर तौलकर उसमें निहित एकनिष्ठ भावना को जगाना श्रेष्ठतम कार्य है। साहित्यकार के व्यक्तित्व और उनकी सृजनात्मक प्रक्रिया के पीछे छिपे हुए भावात्मक बोध को पहचानने की क्षमता सहृदय पाठक के लिए अनिवार्य है। अलग अलग रचनाकार व्यक्तित्व जब अपने अलग अलग दृष्टिकोण को लेकर अभिव्यक्ति के धरातल पर उतरते हैं तब वहाँ अभिव्यक्त उस भावबोध को समानता के ज़मीन पर बिठा देना उतना सरल कार्य नहीं है। यहीं आकर तुलनात्मक अध्ययन सार्थक सिद्ध होता है।

यह लेख हिन्दी भाषा के वरिष्ठ साहित्यकार श्री सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय कृत उपन्यास - शेखर एक जीवनी, मलयालम में लीक से हटकर चलनेवाले रचनाकार ओ वी विजयन के उपन्यास 'खसाक्किन्टे इतिहासम' को तुलनात्मकता के धरातल पर बिठाने का छोटा सा प्रयास है। साहित्य जगत में हर काल के लिए विद्रोही , आत्मान्वेषी, मानवतावादी व्यक्तित्व के रूप में विख्यात हैं ये दोनों कलाकार। दोनों की चिन्तन प्रणाली में कालचेतना का बहुत गहरा असर पडा हुआ है। काल की गति में उलझे हुए जीवन यथार्थ की परिणितावस्था का सही एहसास इन दोनों की रचना की अलग खासियत है। ये दोनों साहित्यकार एक साथ मानवतावादी है और दार्शनिक भी। व्यक्ति स्वातंत्र्य का आग्रह दोनों में प्रबल है। इसी आग्रह को वे व्यक्ति के अस्तित्व के साथ जोडकर देखते हैं। अतः स्वतंत्रता की खोज में भडकनेवाले राहों का अन्वेषी व्यक्तित्व इन दोनों रचनाकारों के भीतर है। इसी मोड पर आकर ये दोनों एक तुले पर तौलने योग्य मालुम पडते हैं।

कवि के रूप में प्रख्यात और विख्यात अज्ञेयजी का गद्यकार व्यक्तित्व अपने पूरे खनत्व के साथ शेखर एक जीवनी में दिखाई पडता है। इस उपन्यास का प्रथम भाग सन 1941 में तथा द्वितीय भाग सन 1944 में प्रकाशित हुआ था। अज्ञेय ने शेखर को गढ लिया था अपने जेलवास काल में। वे कहते है "वह घनीभूत वेदना की केवल एक रात में देखे हुए विशन को शब्दबद्ध करने का प्रयत्न है"[1] अज्ञेय का विद्रोही व्यक्तित्व अपनी पूरी बेचैनियों के साथ शेखर में प्रतिफलित है। काल की विद्रूपताएँ और बेचैनियाँ अज्ञेय को किस प्रकार झकझोरती हैं, अकुलाते हैं इस अकुलाहट को वे शेखर के द्वारा समष्टि तक पहुँचाते है। वे कहते हैं- "जो व्यक्तिका अनुभूत है उसे समष्टि तक पहुँचाया जायें।[2] शायद यही कार्य अज्ञेय को दूसरे साहित्यकारों से अलग करता है।

मलयालम साहित्य जगत का चर्चित रचनाकार ओ वी विजयन की चिन्तन धारा का प्रवाह उनका उपन्यास खसाक्किन्टे इतिहासम में है। उपन्यास का नायक रवी उपन्यास में आद्यन्त यात्री की भूमिका निभाता है । वह अपने लिए एक सराय के अन्वेषण में बेचैन है। यह बेचैनी विजयनजी की अपनी बेचैनी है। शेखर एक जीवनी के शेखर में जिस तरह अज्ञेयजी का व्यक्तित्व और चिन्तनधाराएँ प्रवहित हैं वैसी समानता रवी के चरित्र में देखने को मिलेगा।

शेखर और रवी एक दूसरे के पूरक हैं। शेखर बचपन से लेकर असाधारण रूप से प्रतिभाशाली संवेदनशील एवं विद्रोही है। बचपन काल से लेकर काम,अहं, भय आदि शिशुसहज वृत्तियाँ एक हद तक उसको क्रान्तिकारी बनाती हैं। वह सोचता है "मैं अकेला इसलिए हूँ कि मैं उस प्रकार का नहीं हूँ जिसे लोग अच्छा कहते हैं, मैं पढता नहीं हूँ । किसी का कहना नहीं मानता , डीठ लडका हूँ, शैतान हूँ।"[3] शेखर ने खुद अपने ऊपर यह आरोप लगाया।वास्तव यह समाज द्वारा उसके ऊपर डाला गया आरोप है।इस अवस्था में शेखर समाज से अलग हटकर रहता है। परिवार में अपनी माँ से जो प्यार और लगाव वह चाहता है लेकिन मिलता है केवल डाँट डपट। इसलिए शेखर अपनी एक अलग दुनिया बनाता है। वहाँ भी वह अकेलापन और अतृप्ति महसूस करता है। जो देखता है, सुनता है, और समझता है उसका उलटा कैसे किया जायें यही शेखर की चिन्ता है। ऐसी परिस्थिति में उसकी मुलाकात अपनी मौसेरी बहिन शशी से होती है। शशी शेखर के जीवन को अर्थवान बनाती है। प्रथम मिलन में ही शेखर अपने जन्मजात पुरुषमेधा शक्तिको शशी के उपर डालता है। शशी के माथे पर वह चोट करता है । माँ के पूछने पर शशी ने उत्तर दिया कि गिरने से चोट आयी । इसी घटना से शेखर शशी से अभिभूत हो जाता है। उसे ऐसा लगता है "वह उसकी सगी बहिन नही है पर उस संबन्ध से उसे यदी कोई अन्दर जान पडता है तो दूरी का नहीं बल्कि और अधिक समीपत्व का, एक निर्बाध सखा भाव का, जैसे प्रातः कालीन शारदीय धूप की तरह जिसमें वह उसपर की ही नहीं अपने अन्दर की भी छायाओं को सुला लेता है।"[4]

शशी के अलावा शेखर के जीवन में अनेक लडकियाँ आती हैं। सरस्वती उसकी बडी बहिन है।उसको वह बहुत चाहता था। सरस्वती की शादी उसकी ज़िन्दगी के लिए बहुत बड़ी चोट थी। वह अपनी बहिन का सामीप्य चाहता था। उसके अभाव में वह बालक बहुत अधिक अस्तव्यस्त और बेचैन हो जाता है। बहिन के अभाव में वह संवेदनशील बालक सब कुछ खोया हुआ सा महसूस करता है। उपन्यास में प्रतिमा, शारदा, शान्ति आदि लडकियाँ उसकी पुरुषोचित प्रेमभावना को जगाती हैं अवश्य परन्तु इन सबको वह बीच में ही छोड देता है। लेकिन शशी को वह छोडता नहीं है। बचपन की प्रथम मुलाकात के कई वर्ष बाद दोनों मिलते हैं। तब भी शशी के प्रति उसका पूजाभाव सुदृढ होकर रहता है। उस लंबे वर्ष के अन्तराल में शेखर कुछ न कुछ पाने के रास्ते में भडकता रहता था। राजनीति के क्षेत्र में उसका प्रवेश, स्वयंसेवक के रूप में भरती होना,और अंत में जेल में मृत्यु दण्ड की प्रतीक्षा करना आदि इस भागदौड का परिणाम था। जेल में शशी उससे मिलने आती है। वह शेखर से कहती है - वीर कभी अपराधी नहीं होते। शशी के मुँह से यह शब्द सुनकर शेखर रोमांचित हो उठता है। इस घटना के बाद शशी शेखर के जीवन का अभिन्न अंग हो जाती है। शेखर के प्रति शशी का प्रेम इतना दृढ है कि शेखर के अनुरोध पर ही वह शादी के लिए तैयार हो जाती है। वह शेखर को लिखती है "भविष्य क्या है नहीं जानती ,और मैंने जो मार्ग अपनेलिए निर्धारित किया है उसमें भविष्य होने या न होने का प्रश्न भी नहीं है वह इतना ज्वलित है। पर इतना मैं आज तुम्हें कहती हूँ कि जो मुझे दिया है वह मैं उसमें नहीं भूलूँगी।"[5] शायद इसी कारण से शशी का वैवाहिक जीवन सुखमय नहीं है। इसका परिणाम पतिगृह में उसकी तिरस्कृति है। उसे घर से निकाली जाती है वह शेखर के पास वापस लौटती है। दोनों की ज़िन्दगी एक मोड पर आ जाती है। शेखर के यहाँ शशी रोगिणी हो जाती है। वह शशी की परिचर्या को सर्वस्व समझता है। लेकिन शशी बहुत दुखी है। वह शेखर के व्यक्तित्व को उज्ज्वल बनाना चाहती थी। लेकिन अब उसी के कारण यह कार्य पूरा नहीं हो पा रहा है। यहाँ उपस्थित सभी महत् व्यक्तियों के हर एक का नाम लेकर नहीं, बल्कि सम्मिलित रूप से सबका हार्दिक अभिवादन करता हूँ। शेखर और शशी घनीभूत वेदना में भी अपने प्रणय को संपूर्णता में अनुभव करते हैं।

दुखज्वाला में तपकर शेखर कंचन बनता है। शशी उसकी ज़िन्दगी की स्नेहज्वाला के रूप में विलीन हो जाती है। शेखर का व्यक्तित्व विकास शशी की मनोकामना का परिणाम है। उपन्यास में आद्यन्त शेखर विद्रोही है। लेकिन यह उसका दोष नहीं है। वह अपने अस्तित्व के लिए विद्रोह करता है। धीरेधीरे यह विद्रोह अहं के रूप में तब्दील हो जाती है। यह अहं

उसके अन्दर के यौन भावनाओं को जगाता है। शेखर का सेक्शौल अहं हमेशा अतृप्त रहता है। ज़िन्दगी में कभी भी उसकी इच्छाओं की पूर्ती नहीं होती। जीवन सागर की लहरों में उडते गिरते तैरनेवाला शेखर आद्यन्त एक आम मानव है। जो किसी भी प्रकार के समझौते के लिए तैयार है। अज्ञेय के शब्दों में शेखर कोई बडा आदमी नहीं है , वह अच्छा आदमी भी नहीं है। लेकिन वह मानवता के संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है। लेकिन अंत तक उसके साथ चलकर आपके उसके प्रति भाव कठोर नहीं होंगे। ऐसा मुझे विश्वास है, और कौन जाने आज के युग में जब हम आप सभी संश्लिष्ट चरित्र है तो आप पाएँ कि आपके भीतर कहीं पर शेखर है जो बडा नहीं अच्छा भी नहीं लेकिन जागरूक और स्वतंत्र और ईमानदार है वह बडा और अच्छा नहीं इसलिए वह सर्वाधिक हमारा अपना बनता है।

लगभग यही अपनत्व का भाव खसाक्किन्टे इतिहासम के रवी के प्रति पाठकवर्ग का है। रवी एक संपन्न मध्यवर्गीय परिवार में। वहाँ उसे प्यार करने के लिए उसके माँ बाप है । लेकिन उसके जन्म के साथ माँ की मृत्यु रवी पर घोर आघात डालता है। फिर भी पिता की स्नेहछाया में वह बढता है । ज्योतिशास्त्र में डिग्रियाँ हासिल करता है। इसी विषय में रिसर्च करने की इच्छा उसको है। पद्मा उसके प्रोफेसर की बेटी है वे दोनों आपस में प्यार करते हैं। पद्मा के प्रयत्न से उसको प्रिन्स्टन यूनिवर्सिटी में रिसर्च के लिए भर्ती होने की अनुमती मिलती है। एक सुशिक्षित युवक के सुन्दर भविष्य के लिए यह काफी था। लेकिन एक साधारण आदमी को उसकी दमित वासनात्मक अनुभूतियाँ जिस प्रकार कचोटती है, निराशाग्रस्त बना देती हैं। उसी प्रकार रवी के भीतर का वह साधारण निराशाग्रस्त आदमी उसके सुनहले भविष्य को कुचल डालता है। बचपन काल में माँ को खो देना, माँ की ताज़ी स्मृतियाँ,माँ को पुनः पाने की तीव्र इच्छा उसके मन में है। वह कभी कभी बचपन काल की स्मृतियों में डूब जाता था। माँ ने अपने भरे पेट पर उसको लिटाकर छोटे छोटे मेघजालों को दिखाकर ,चन्दामामा को दिखाकर उसको पुचकारती थी ।खुश करती थी। माँ से उसका यह लगाव यौवन काल में आकर एक अनैतिक रूप धारण करता है। क्योंकि सभी प्रकार की नैतिक मान्यताएँ छोडकर वह अपनी काकी के साथ अनैतिक संबन्ध स्थापित करता है। यह घटना, यह अपराधबोध रवी के व्यक्तित्त्व को कुरेदता है। किए गए गलती का अवबोध उसको निराशावान बना देता है। वह केंचुए की तरह स्वयं को अपने में समेटता है। यह अकेलापन और संत्रास उसके लिए असहनीय हो जाता है। सब कुछ अपने पिता ,परिवार, पद्मा सबको छोडकर दूर कहीं जाना चाहता है वह। इस अवस्था में रवी भय से भी पीडित है। सम्मिश्रित मनोवेगों के बीच स्वयं को पहचानने का भरसक प्रयत्न रवी को पलायन करने के लिए प्रेरित करता है। अस्तित्वहीनता का बोध उसको स्वत्वान्वेषी बना देता है। इस अवस्था में वह अपने समस्त संबन्धों, सुनहले भविष्य सबको छोडना चाहता है। सबसे पहले वह स्वामी बोधानन्द के आश्रम में पहुँचता है। वहीं से उसकी खोजयात्रा शुरु होती है। यह यात्रा पालक्काडु से खसाक्क नामक गाँव तक था। जब गाडी कूमनकावु स्टाप पर रुकती है, रवी वहाँ उतरता है। यह जगह रवी के लिए चिरपरिचित सी लगती है। उपन्यास में रवी अपनेलिए एक सराय की खोज करनेवाले पथिक की भूमिका निभा रहा है। खसाक्क उसके लिए अपना सराय है। यहाँ आकर उसे ऐसा लगता है कि उसके स्वत्व की खोज यहीं पूर्ण हो जाएगी। खसाक एक विशेष प्रकार का गाँव हैं । उसका अपना इतिहास है। अपनी विलक्षणता है। असल में यह जगह कई मिथकीय और ऐतिहासिक चरित्रों और घटनाओं का खजाना है। यहाँ ऐसे रंगीन चरित्र भी रहते हैं जो हमारे अपने लगते हैं। खसाक्क में रवी एक एकाध्यापक स्कूल खोलता है। वहाँ के अशिक्षित और गँवार बच्चों को वह पढाता है। वहाँ के लोगों के लिए रवी उनका अपना था । खसाक्क में आकर रवी भी अपने जीवन की निरर्थकता को भूल जाते हैं। उसको लगता है कि उसके जन्म का उद्देश्य यहीं आकर पूर्ण हुई हो । उपन्यास में कई चरित्र जैसे शिवरामन नायर, माधवन पिल्लै, अप्पुक्किली, अल्लाप्पिच्चा, मोल्लाक्का, नैसेमली, आदि खसाक्क का जीवन ही है। वे सब किसी न किसी शोचनीय परिस्थिती का शिकार है और उपेक्षित भी। अप्पुक्किली एक बुद्धिहीन असमर्थ बालक है।

माधवनपिल्लै सनाथ होते हुए भी अनाथ है।

सेक्स की भावना रवी के चरित्र में प्रबल है। उपन्यास में ओ वी विजयन ने कई स्त्री पात्रों की रचना की है। पद्मा, मैमुना, आबिदा, कोडची आदि। इनमें पद्मा में आकर रवी का प्रेम पूर्णतः परिभाषित हो जाता है। खसाक्क में उसका कुछ स्त्रीयों के साथ यौन संबन्ध भी है। पद्मा का रवी के साथ इतना पवित्र प्रेम था कि सात वर्ष के बाद वह विदेश से लौटती है मात्र रवी को पाने के लिए। उसको सुधारने के लिए। वह कहती है - "सात वर्ष में प्रिन्स्टन में थी। वापस आने के उसी दिन से लेकर मैं रवी की खोज में भडकती रहती थी।[6] वह रवी को अपने साथ ले चलना चाहती है । वह पूछती है रवी तुम मुझसे कहो कि तुम खसाक्क छोडकर मेरे साथ आएगा। रवी उत्तर देता है "मुझे मालूम नहीं। उत्तर सुनकर वह रोती है और पूछती है "रवी तुम खुद को किससे बचाकर भागते हो, तुम किससे डरते हो।"[7] इन वाक्यों में पद्मा की निराशा का भाव है। रवी की खोजयात्रा की अपूर्णता का द्योतन भी इन शब्दों में है।

तुलनात्मकता के धरातल पर आकर अज्ञेयजी का शेखर और ओ वी विजयन का रवी लगभग एक ही प्रकार की संवेदनावाले, एक ही प्रकार की परिस्थिति से गुज़रनेवाले मालूम पडते हैं। परिस्थितिजन्य मानसिक पीडा अपनी चरम सीमा तक पहुँचकर विद्रोह का रूप धारण कर लेता है। यह पीडा अज्ञेय की अपनी है। इसका प्रस्फुटन शेखर के चरित्र में है।स्वतंत्रता या मुक्ति की अदम्य चाह, अहंनिष्ठता से उत्पन्न भय शेखर को विद्रोही बनाता है। सामान्य तौर पर उसका व्यक्तित्त्व एक विद्रोही का नहीं है। एक संवेदनशील निष्कलंक एवं निस्वार्थ व्यक्ति को शेखर में हम देख सकते हैं। उसकी यह संवेदनशीलता उसको जेल में मृत्यु को सहर्ष स्वीकार करनेवाला बना देती है।

ओ वी विजयन के रवी के चरित्र में शेखर की सी विद्रोहात्मकता है। अहंनिष्टता भय मुक्ति की चाह आदि रवी के चरित्र में सर्वत्र विद्यमान है। खोकर पाने की इच्छा रवी के व्यक्तित्त्व की अपनी खासियत है। काकी के साथ अनैतिक संबन्ध स्थापित कर वह अपनी ज़िन्दगी को खो देता है। खोये हुए अपने स्वत्व को पाने की इच्छा रवी को खसाक्क तक ले जाता है। खसाक्क में वह यह महसूस करता है कि उसकी जडें यहीं जम गई है। फिर भी वह वहाँ रुकता नहीं है।खसाक्क को पीछे छोडकर दूसरे सराय की खोज में वह चल निकलता है। वह अपने को अपूर्ण मानता है। इसलिए अपनी प्रेयसी पद्मा से बचकर,एक ऐसी जगह की खोज में चल निकलता है जहाँ किसी की भी नज़र न आ जायें ।

दोनों उपन्यासों को तुलनात्मकता के धरातल पर रखेंगे तो इनके प्रमुख चरित्र शेखर और शशी, रवी और पद्मा के आपसी संबन्ध में एक विशेष प्रकार की एकरसता का एहसास होता है। ये दोनों युगल एक ही केन्द्र से उत्पन्न, विकसित और एक ही परिणत बिन्दु पर समाहित होनेवाले चरित्र है। दोनों उपन्यासों में पात्रों के विकास के मनोवैज्ञानिक स्तर को दिखाया गया है। इस दृष्टि से दोनों की तुलना एकदम संगत ही रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ

(1) शेखर एक जीवनी, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय

(2) खसाक्किन्टे इतिहासम - ओ वी विजयन

पादटिप्पणी

(1) अज्ञेय-शेखर एक जीवनी(भूमिका) पृष्ठ संख्या- 8

(2) डॉ. शिवकुमार मिश्र हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ पृष्ठ. सं-534

(3) अज्ञेयः शेखर एक जीवनी(भूमिका) पृष्ठ सं-10

(4) अज्ञेय शेखर एक जीवनी पृष्ठ सं -32

(5) अज्ञेय शेखर एक जीवनी पृष्ठ सं -77

(6) ओ वी विजयन खसाक्किन्टे इतिहासम पृष्ठ सं- 154

(7) ओ वी विजयनः खसाक्किन्टे इतिहासम पृष्ठ सं- 156

सह आचार्य

महाराजास कॉलेज, एरणाकुलम

समकालीन हिंदी उपन्यासों में दलित विमर्श

डॉ. सफीना.एस.ए.

दलित साहित्य आज अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष कर रहा है । समाज द्वारा दी गई वेदना,पीड़ा और अपेक्षा आदि विभिन्न समस्याओं को अपने जीवन यथार्थ के ज़रिए दलितों ने प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में जाति भेद, वर्ग भेद, छुआछूत, उपेक्षा की भावना आदि का विरोध हुआ है इसलिए यह समानता का साहित्य है। दलित शब्द का अर्थ है कुचला हुआ, दमित और शोषित वर्ग। 1970 महाराष्ट्र में दलित शब्द का सबसे अधिक प्रचार हुआ था। अस्पृश्यता का शिकार होने वाले, सदियों से शोषित दलित वर्ग संघर्ष और प्रतिरोध के माध्यम से सामाजिक महत्व पाना चाहते हैं।

समकालीन हिंदी उपन्यासों में दलित समाज के संघर्ष और अस्मिता की पहचान को एक नयी अभिव्यक्ति मिली है। दलित जीवन के मूल्यो, संवेदनशीलता को साहित्य में लिपिबद्ध करने की चेष्टा में कई बार मेरे हाथ ही नहीं जले, तन मन भी जला है। लेकिन युगों युगों की यातना से मुक्ति की भावना के आगे निजी पीड़ा अर्थहीन लगती है। रचनाओं के ज़रिए अपनी बात को असंख्य पाठकों तक पहुँचाने की कोशिश में कितना सफल हुआ हूँ, यह तो पाठक ही बता सकते हैं। यानी दलित साहित्य उन तमाम परंपराओं को चुनौती देता है जो सदियों से अपने जन्मसिद्ध मूल्य बोध अधिकारों से वंचित उन्हें गुलाम बनाकर रखता है। वास्तव में दलित साहित्यकार दलितों की अस्मिता की तलाश करते हुए उनकी दयनीय अवस्था में बदलाव लेने के लिए प्रतिबद्ध रहते हैं और उनमें नव चेतना पैदा करने की कोशिश करते हैं। दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ रचनाकार है- ओमप्रकाश वाल्मीकि, जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, सुशीला टाक भैरे आदि इन साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से शोषित दलित पीड़ा का यथार्थ एवं मार्मिक रूप चित्रित किया है।

जयप्रकाश कर्दम का उपन्यास छप्पर में दलित समाज की समस्याओं के साथ-साथ दलित स्त्रियों के यौन शोषण का भी चित्रण किया गया है। यानी एक और स्त्री समस्या है तो दूसरी और दलित स्त्री होने के कारण हो रहा शोषण भी है। इस प्रकार दोयम शोषण की शिकार होने वाली स्त्री का चित्रण है। उपन्यास में सुकखा और उसका बेटा चंदन दलित उन्नमन के लिए परिश्रम करते रहते हैं। अनपढ़ सुकखा शिक्षा का महत्व समझना है इस कारण वह अपने बेटे को शहर में पढ़ाने के लिए भेजता है। वहाँ उसे काफी सारी परेशानियों का सामना भी करना पड़ता है। सवर्ण लोग दलितों को शिक्षा से दूर रखते हैं ताकि वह अपने अधिकारों से वंचित रहे। इस उपन्यास में शिक्षा रूपी छप्पर की ज़रूरत का संदेश प्रस्तुत किया गया है।

समकालीन दलित साहित्यकारों में अत्यंत उल्लेखनीय नाम है मोहनदास नैमिशराय उन्होंने अपना उपन्यास 'आज बाजार बंद है' में देह व्यापार में फंसे दलित महिलाओं की दारुण दशा का चित्रण किया है। प्रस्तुत उपन्यास में वेश्यावृत्ति जैसी समस्या को दलित परिवेश से जोड़कर लिखा है। प्रस्तुत उपन्यास में देह व्यापार करने वाली वेश्या फूल के साथ उसका बेटा बाबू का भी दारुण चित्रण दिखाया है। उसकी दुर्गति को ज़ाहिर करते हुए शबनम भाई बताती है कि- "बाप के नाम के बिना तो स्कूल में दाखिला नहीं मिलता ना.. अब यह बेचारी किस-किस का नाम बाप के खाने में दर्ज कराती।" यानी वेश्याओं को समझ में निकृष्ट और उपेक्षित समझा जाता है और उनके बच्चों के साथ भी समाज बुरी तरह से व्यवहार करता

है। वृद्ध होने पर भी वेश्या बनाकर जीवन काटने के लिए मजबूर शबनम बाई को भी समाज उसकी उम्र के लिहाज को नहीं बल्कि पेशो की नज़रिया से उसका मूल्यांकन करता है। प्रस्तुत उपन्यास में पार्वती के ज़रिए दलित देवदासियों की दास्तानकथा को भी रचनाकार ने प्रस्तुत किया है उपन्यास के अंत में सुमित नाम का पत्रकार के द्वारा वेश्या मुक्ति के लिए संघर्ष करते हुए दिखाया है। इस प्रकार आज बाजार बंद है उपन्यास में प्रतिरोध की चिंगारी को दिखाया है। दलित जीवन के भोगे हुए यथार्थ का चित्रण करने वाली एक और सशक्त लेखिका है सुशीला टाकभौरे 2017 में प्रकाशित वह लड़की नामक उनका उपन्यास दलित नारी के शोषण संघर्ष और उसके साहस का यथार्थ चित्रण करता है। अंबेडकरवादी विचारधारा को आधार बनाकर लिखा गया यह उपन्यास 11 भागों में विभक्तहै। इस उपन्यास में एक ओर दलित अशिक्षित नारियों की समस्याओं का चित्रण है तो दूसरी ओर उनकी लडकियों को शिक्षित बनाकर समाज में स्त्री पुरुष समानता लाने के लिए प्रयास करते हुए दिखाई देती है। उपन्यास में मोनी, बबली,निशा,निम्मी,प्रिया, शैला आदि शिक्षित होकर अपने पैरों पर खड़े होकर सफल और जागृत हो जाते हैं। महिला आंदोलन से जुड़कर शोषित और पीड़ित महिलाओं को जागृत करने का प्रयत्न निशा करती है तो श्यला घर और परिवार की जिम्मेदारियां के साथ-साथ दलित आंदोलन में भी अपनी भूमिका निभाती है इस तरह वह दलित समाज में जागृति पैदा करने के लिए प्रयत्न करती है एक दलित स्त्री होने पर भी उसके माँ-बाप उसे पढ़ाकर प्रोफेसर बनाते हैं। उसके अनुसार दलित समाज की सबसे अहम समस्या पानी, बिजली और नौकरी की समस्या है। वह कहती है कि- "हमारे दलित समाज में कितनी गरीबी है कितने अभाव और अभियान का जीवन जीते हैं हम और बच्चे? बच्चों का वर्तमान कितना चिंताजनक है, और भविष्य? भविष्य भी क्या आसानी से संवार पाएगा? आजाद देश में रहकर भी हमारी दशा ऐसी क्यों है.. दलित आंदोलन,नारी आंदोलन कब से चल रहे हैं? फिर भी हमारी यह हालत है। यानी सदियों से दलित वर्ग अपमान परतंत्रता और आर्थिक दरिद्रता से जीवन बिताने के लिए मजबूर रहा है। लेकिन करना और अभियान के साथ जीने के लिए वह अब तैयार नहीं है। वह लड़की उपन्यास के माध्यम से लेखिका दलित स्त्री समाज के भोगे हुए यथार्थ का चित्रण करने के साथ-साथ जाती भेद, परंपरा के नाम पर शोषित नारियों का प्रतिरोध भी दर्ज करती है। उनके अन्य उपन्यास है नीला आकाश तुम्हें बदलना ही होगा आदि मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास मुक्ति पर्व भी दलित मुक्ति पर आधारित एक सशक्त उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में भी लेखक ने दलितों की दारू जिंदगी की करनी और पीड़ा को दिखाया है साथ ही शिक्षा के महत्व को भी उजागर किया है। उपन्यास का दलित पत्र पढ़ना चाहता है लेकिन पाठशाला में भी जाति के कारण उसे गालि मिलती है। इसके विरुद्ध वह आवाज उठाता है। इस तरह यह उपन्यास सचमुच मुक्ति की राह खोजना है।

दलित साहित्य वास्तव में दलित मुक्ति कामी विचारधारा का साहित्य है। दलित साहित्यकार साहित्य के माध्यम से छुआछूत को मिटाने और समाज में समानता की उपस्थिति दर्ज करने का प्रयास करता है। वह अपने भोगे हुए जीवन अनुभवों को प्रस्तुत करते हुए दलित समाज के लोगों में चेतना जगाने में सक्षम होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ओम प्रकाश वाल्मीकि -मुख्य धारा और दलित समाज, पृष्ठ- 22
2. मोहनदास नैमिषराय -आज बाजार बंद है, पृष्ठ- 95
3. सुशीला टाकभैरे-वह लड़की, पृष्ठ -17

पी.डी.एफ़.
हिंदी विभागे, कुसाट

प्रवासियों की आर्थिक समस्याएँ : एक अवलोकन

(दिव्या माथुर के 'मेड़ इन इंडिया और अन्य कहानियाँ' संग्रह के संदर्भ में)

डॉ. सपना सैनी

प्रवासी साहित्य से भाव उस साहित्य से है जो प्रवासी जीवन के यथार्थ, समस्याओं और समाधान को सामने लाता है। इंग्लैंड, अमेरिका, कैनेडा, नीदरलैंड, जर्मनी, फ़िजी, कीनिया आदि देशों में प्रवासी लेखक अपनी रचनाओं से महत्त्वपूर्ण योगदान डाल रहे हैं। देश-विदेश के बीच अवागमन करते साहित्य की रचयिता दिव्या माथुर प्रवासी हिन्दी लेखन की प्रतिनिधि रचनाकार है। किसी भी साहित्यकार पर सम-सामयिक परिस्थतियों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता है। उसके व्यक्तित्त्व को बनाने में इन परिस्थितियों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। साहित्यकार की कृतियों में उसके जीवनानुभव ही झलकते हैं। इस दृष्टि से ब्रिटेन में बसी भारतीय मूल की हिन्दी लेखिका दिव्या माथुर एक विशिष्ट रचनाकार है।

आर्थिक साधनों को प्राप्त करने के लिए या किन्हीं अन्य कारणों से अपना देश छोड़कर अन्य जगह निवास करने वालों की समस्याओं, अनुभवों की अभिव्यक्तिही प्रवासी लेखन है। प्रीतम सिंह कैंबो के मतानुसार- "प्रवासी मनुष्य वह होता है जो अनिश्चित समय के लिए अपने वतन को छोड़कर पराए मुलक में रिजक के लिए विचरता है।"[1] इस तरह रामायण काल से शुरू हुआ प्रवास आधुनिक संदर्भों में बदलते हुए संदर्भों में सामने आता है। जोकि मनुष्य की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने और विदेश के प्रति मोह के रूप में सामने आ रहा है। प्रवासी जीवन का दर्पण प्रस्तुत करने वाली दिव्या माथुर की हर रचना की अपनी एक निजी विशेषता है। इन्होंने अपने मूल्यवान साहित्य के द्वारा प्रवासी जीवन का यथार्थ सामने लाने का प्रयत्न किया है जो कि कहीं ना कहीं सफल होकर इन्हें सफलता के मंच तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है। वर्ष 2013 में प्रकाशित 'मेड इन इंडिया और अन्य कहानियाँ' संग्रह इसका सशक्त उदाहरण है।

विवेच्य कहानियों में दर्शाया गया है कि वर्तमान प्रवासी व्यक्तिस्व-केंद्रित हो गया है। वह पैसे के लिए इधर-उधर भटक रहा है। आधुनिक युग में लोगों का अपनी अकांक्षाओं की पूर्ति के लिए पैसा कमाने के प्रति सचेत होना और स्वार्थ में आकर अपने रिश्तों को दांव पर लगा देना एक सामान्य बात हो गई है। मेड इन इंडिया और अन्य कहानियां कहानी संग्रह में आर्थिक चेतना के बिन्दु इस प्रकार सामने आते हैं -

आर्थिक समस्याएँ: प्रवासी जीवन में रिश्तों के टूटने का मुख्य कारण आर्थिक समस्याएँ ही हैं। आधुनिक युग में मनुष्य अपनी अकांक्षाओं की पूर्ति के लिए स्वार्थ में आकर अपने रिश्तों को दाव पर लगा देता है। वहीं प्रवास में आर्थिकता के दबाव में पिस रही मनुष्य की आत्मा का वर्णन भी मिलता है। आर्थिक समस्याओं के कारण वह दुर्बल जीवन जीने को विवश है।

'गूगल' शीर्षक कहानी में भूख की विवशता के कारण जानम (चुहिया) और गूगल (चूहा) दोनों सड़क पर दौड़ते हैं। जानम (चुहिया) को भूख इतनी विवश कर देती है कि वह भीड़ वाली सड़क पर ही गूगल (चूहा) को मैकडोनल्ड की तरफ दौड़ा देती है- "चिप्स के लालच में बेचारे गूगल की जान गई। फुर्ती दिखाता तो गूगल यूँ न मरता; अच्छे रहन सहन की वजह से हम दोनों मुटा गए थे. अब मेरा और बच्चों का क्या होगा? गूगल के बगैर जिंदा रहने का फ़ायदा भी क्या था?"[2]

3000 नामक कहानी में प्रवास के दौरान पीटर और जैन्नी की आर्थिक हालत अच्छी नहीं रहती और वह दुखों से भरा जीवन व्यतीत करते हैं- "वसीयत लिखने की बात तो अब इतिहास हो गई, वैसी भी बच्चों को देने के लिए हमारे पास अब बचा ही क्या है, क्यों पीट? एक मोटा और खुरदरा कंबल लपेटे पीटर और जैन्नी सोफ़े पर एक दूसरे से चिपके बैठे बुझे हुक्के गुड़गुड़ाते रहते थे।"[3]

कहानी में ब्रिटेन के ब्लैक-रिसेशन के बाद प्रवासियों की आर्थिक स्थिति का वर्णन है कि

किस तरह भूख से तंग आकर वह आत्महत्या करने तक को मजबूर हो जाते हैं- "किंतु समय सचमुच ही बहुत खराब था. उनके बहुत से दोस्तों ने ठंड, भूख और निराशा से तंग आकर आत्महत्या कर ली थी. कुछ एक ने आजिज़ आकर अपने जीवन-साथियों को ही जान से ही मार डाला था और अब जेलों में सड़ रहे थे, जिनकी हालत तो सुना था कि नर्क से भी बद्तर थी।"[4]

पीटर और जैन्नी जो कि प्रवास के दौरान अपने जन जीवन को चलाने के लिए कई मुश्किलों का सामना करते हैं। अपने बच्चों को उचित सुविधाएँ देने के लिए वह अपना जीवन दांव पर लगा देते हैं- "बच्चों के स्कूल और कॉलेज की फ़ीस भरने के लिए पीटर और जैन्नी आधा पेट खाकर और औक्सफ़ैम जैसी धर्मार्थ संस्थाओं से पुराने और सस्ते कपड़े ख़रीदकर साल-दर-साल गुज़ारा करते रहे थे। इसके बावजूद लाए नल और लाना की पढ़ाई बीच में ही छूट गई थी; हकूमत चाहती ही नहीं थी कि साधारण घरों के बच्चे ऊँची शिक्षा प्राप्त करें।[5] कहानी के मुख्य पात्र पीटर और जैन्नी कई आर्थिक समस्याओं का सामना करते हैं। अपना पेट भरने के लिए उन्हें बूढ़ा-घर का सहारा लेना पड़ता है- "चलो क्रिकल्वुड-बूढ़ा-घर में जाकर बैठते हैं, वही टोस्ट और कौफ़ी से पेट भी भर लेंगे. मुसीबतें उनके सिर पर चट्टानों सी टूट रही थी। वे अपनी जान बचाने के लिए उसी बूढ़ा-घर की छत के नीचे पहुँचे जहां न जाने की उन्होंने कभी कसम खाई थी।"[6]

इस तरह विदेश में अपने जन जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है और अपना पेट काट कर अपने बच्चों को आर्थिक सुविधाएँ दी जाती हैं। लेखिका ने प्रवासी व्यक्ति की धन लालसा को अपनी कहानियों में व्यक्त किया है। 'एक चोर चार सिपाही' कहानी में पैसे का बढ़ता हुआ लालच अंतर्राष्ट्रीय कंपनी की बॉस के द्वारा चित्रित किया गया है। मैडम ठाकुर कम पैसे देकर कर्मचारियों से अधिक पैसे भरवाकर हस्ताक्षर करवा लेती है। इस तरह वह कम्पनी के अन्य कार्यों के लिए आया पैसा भी अपने घर के कामों में खर्च करती। पैसे की बढ़ती लालसा के चक्कर में उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता है- "दस्तावेज़ पर मैडम की उंगली के निर्देशानुसार चन्दों ने उल्टे हाथ से जैसे तैसे घुघ्घी मार दी। केवल तीन पाउंड प्रति घंटा के हिसाब से वेतन देकर मैडम ठाकुर सफ़ाई कर्मचारियों से छै पाउंड चालीस पैंस प्रति घंटे की दर से घुघ्घी लगवा लेती थी"[7]

'कबाड़' कहानी में पैसे के लिए मनुष्य का स्वार्थ सामने आता है। रीटा अपनी सास के सहेजे हुए समान को कबाड़ समझती थी लेकिन फिर स्वार्थ में आकर वे उसी कबाड़ को बेचकर पैसे कमाने की सोचती है। अपने भाई के साथ मिलकर वे उस कबाड़ को बेचना चाहती है-"इन्दिरा उसके तिकड़मी और चलता-पुर्जे भाई को बहुत अच्छी तरह से जानती थी. सामान बेचकर वह पैसा खा जाएगा और उपर से एहसान अलग जताएगा।[8]

भूख से विवश जीवन जीने वाले कई मनुष्य अपनी जिंदगी की दौड़ में हार जाते हैं। 'गूगल' नामक कहानी में भूख की व्याकुलता के आगे हारी हुई जिंदगी का चित्रण मिलता है। गूगल (चूहा), जानम (चुहिया) की भूख मिटाने के लिए सड़क पार करता है और भूख के आगे उसे कुछ नही दिखाई देता है। वह बस के नीचे आकर अपनी जान गवाँ देता है-"ये लोग कूड़ा-करकट सिर्फ डस्टबिंस में ही फैंकते है; मैंने झल्लाते हुए कहा. तेल के ताजा धब्बों से रचे उस लिफ़ाफे में जरूर चिप्स होंगे; मेरे मुंह में पानी भर आ गया। ठीक है जानम; कहता हुआ गूगल स्टेशन के बाहर रुकी चौहत्तर नंबर की बस के नीचे पहुँच गया।[9]

कहानी में भूख की विवशता के चलते रिश्तों पर पड़ते प्रभाव का वर्णन है कि किस तरह पेट की भूख मिटाने हेतु कई बार एक दूसरे को ख़ाकर ही भूख मिटानी पड़ती है। गूगल (चूहा) जानम (चुहिया) को समझाता है कि किस तरह पेट की भूख व्यक्ति पर इतनी भारी पड़ जाती है उसे अपने बच्चों को खाकर भूख मिटानी पड़ती है- बिना बाहर निकले भोजन का इंतज़ाम करना असंभव हो गया था. मुझमें उठ पाने की भी शक्ति ही नहीं बची थी। "भूख लगने पर जानम, सांप और मछलियाँ अपने बच्चों तक को खा लेते है; गूगल ने एक बार मुझे बताया था।"[10]

'बाराती घराती और सैम' नामक कहानी में पेट की भूख को चित्रित किया गया है। किस तरह

मनुष्य भूख के आगे व्याकुल हो जाता है। उस अवस्था में वह कुछ भी खाने को तैयार हो जाता है। बारात के आने पर किस तरह भिखारी कढ़ी में गिरी चप्पल निकालकर चाट लेते हैं- "चप्पलें, जूते और छड़िया घुमाते घराती उद्दंड भिखारियों को खदेड़ने में लगे थे। तभी एक फटेहाल औरत भिखारियों से घिरे बच्चे की कमीज़ उतार कर उसे पीटने लगी. बच्चे पर पिटने का कोई असर नहीं हुआ; अपनी ढीठ आंखों में आशा की एक ज्योति लिए वह अब भी बारातियों की ही ओर देख रहा था कि उनमें से फिर कोई जूता या चप्पल फैंकें तो शायद आज उसका पेट भर जाए।"[11] इस तरह भूख की व्याकुलता मनुष्य की दयनीय स्थिति कर देती है। जिसके आगे उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता।

आधुनिक मनुष्य सम्पत्ति की लालसा में परिवार या रिश्तों को अहमियत ना देता हुआ अपने ही स्वार्थ को सिद्ध करने में लगा हुआ है। पैसे के प्रति आकर्षण ने मनुष्य को अकेला खड़ा कर दिया है। ब्लडी कोठी नामक कहानी में संपत्ति की वजह से रिश्तों में आई खटास दिखाई देती है। व्यक्ति अपने रिश्तों को अहमियत न देता हुआ मात्र स्वार्थ सिद्ध करने की लालसा रखता है- "उनकी जायदाद से नब्बे हज़ार रुपये महीना किराया आ रहा था अब तक। इसी ब्लडी कोठी के किराए की वजह से मज़े उड़ाते रहे हो तुम सब।"[12]

कहानी में संपत्ति के लालच में आकर रिश्तों में बिखराव सामने आता है। मात्र पैसे का लालच ही प्रधान रहता है। जायदाद के लालच में आकर मानसी का दामाद डैनियल पत्नी का हिस्सा पाने के लिए दिलचस्पी दिखाने लगता है। अपना हिस्सा लेने के लिए वह पत्नी को उत्साहित करता है- "वाए नौट? यू वर हिज़ डार्लिंग डौटर, ही हैज़ लैफ़्ट इट फ़ौर यू. अवर किड्स विल बी सो प्राउड औफ़ देयर इन्हैरिटैंस वन डे, हनी; डैनियल का तर्क सुनकर महक को लगा कि शायद वह ठीक ही कह रहा था।"[13]

बाराती घराती और सैम कहानी में पारा सैम के साथ मात्र अपनी दोस्ती पैसे तक ही सीमित रखती है। जैसे ही सैम के माता पिता गुजर जाते हैं तो शोक प्रकट करने वाले लोगों की भीड़ रोज़ देखकर वह उसका साथ छोड़कर चली जाती है- "पारा को सैम के दुख का कोई अंदाजा नहीं था; उसके लिए तो शराब हर ग़म का इलाज थी। शराब, ड्रग्स और सैक्स; यह सब कहीं सस्ते में तो मिलते नहीं और अपना पर्स खोलने को पारा तैयार नहीं थी।"[14]

'एक चोर चार सिपाही' कहानी में पैसे की बढ़ती लालसा के चलते मनुष्य में आया स्वार्थीपन दिखता है। जिसमें मनुष्य दूसरों की भावनाओं को ठेस पहुँचाने में भी पीछे नहीं हटता है। मैडम ठाकुर अंतरराष्ट्रीय कम्पनी में कार्यरत होकर घोटाले करती है। लालच में आकर वह अपना ईमान तक खो देती है- "दफ्तर के ऐंटीक-फ़र्नीचर को बेचकर मैडम ठाकुर हज़ारों पाउंड्स खड़े कर चुकी थी; बदले में आइकिया से सस्ता और सैकंड-हैंड फ़र्नीचर लाकर दफ़्तर में रख दिया गया था. मंहगी क्रौकरी और कटलरी वह अपने घर ले गई थी और उसकी जगह उन्होंने पोपट अथवा पाउंड-शौप का सस्ता सामान रखवा दिया था।"[15]

धन का लालच मनुष्य को एक अंधेर में डाल देता है। मैडम ठाकुर को घोटाले करने पर विदेश से निकाल दिया जाता है, लेकिन वह भारत में भी घोटाले करती है और अपना स्वार्थीपन जारी रखती है-"सुनने में आया कि मैडम ठाकुर की पदोन्नति हो गई थी और वह अब लखनउ वाले दफ़्तर की सर्वे-सर्वा थी; फ़र्क सिर्फ इतना था कि अब वह पाउंडस में नहीं रूपयों में पैसा बना रही थी।"[16]

'कबाड' शीर्षक कहानी में रिश्तों के मूल्य को ना समझकर मात्र धन का स्वार्थ ही सामने आया है। इन्दिरा की बहू रीटा जो पहले सास की सहेजी हुई यादों को कबाड़ का नाम देती थी। लेकिन फिर धन को पाने की खातिर वह उसी सहेजे हुए सामान को बेच कर पैसे कमाने की सोचती है- "रीटा ने सोचा इससे पहले कि इन्दिरा का मन बदल जाए, इस कूड़े-कर्कट को बेचकर जो दो चार पाउंड्स हाथ में आए वही ठीक थे।"[17]

कहानी में धन संपत्ति के लालच में बदलता हुआ नज़रिया सामने आता है। सास के सामान को रीटा कबाड़ कहती हुई दुत्कारती रहती थी। पर जैसे ही उसे उस कबाड़ की क़ीमत पता चलती है तो वह अपने विचार बदल लेती है- दिस इज़ औल रब्बिश

सिस, पर तुम कहती हो तो मैं कबाड़ी बाज़ार में पता लगाता हूँ। रंजीत एक नज़र में ही जान गया कि इस कबाड़ से दो ढाई हज़ार पाउंड्स खड़े किए जा सकते थे।"[18]

'ज़हर मोहरा' कहानी में धन लालसा के चलते रिश्तों में आती ख़टास का वर्णन है। महिका की शादी के समय उसके पिता उसको घर में आधा हिस्सा देने का अहसास दिला रहे थे। लेकिन महिका के भैया-भाभी को पिता का यह ऐलान ठीक नहीं लगता- "उनकी बेटी इंगलैंड जा रही थी। क्या वह जानते थे कि महिका एक दिन लौटेगी? भैया-भाभी को पिता की यह बात बिल्कुल अच्छी नहीं लगी थी. महिका एक अमीर देश में जा रही थी; उसे भला क्या ज़रूरत थी इस घर के आधे हिस्से की?"[19]

कहानी में संपत्ति की लालसा में महिका के भैया-भाभी उसे मकान में हिस्सा न लेने के लिए व्यंग्य भरी बातें कसते हैं। रिश्तों के मूल्यों को ना समझते हुए मात्र वह संपत्ति को ही पाना चाहते थे-"तुम्हारी शादी में पापा जितना खर्च कर रहे है न, माही उतनी तो इस मकान की क़ीमत भी नहीं होगी; भाभी ने व्यंग्य में कहा।"[20]

मनहूस कहानी मनुष्य के बदलते हुए संदर्भों को दिखाती है। धन को पाने की खातिर मनुष्य किस हद तक जा सकता है। पैसे का आर्कषण कैसे मनुष्य को अंधा बना देता है। उसे अपने रिश्तों की अहमियत ही नहीं रहती। ऐडम के माँ-बाप उसे पैसे के लालच में ही पागल बनाकर रखते हैं। यहाँ तक कि उसका इलाज भी नहीं करवाते। ताकि उन्हें सरकार से जो पैसे मिलते हैं वो बंद न हो जाए-"अगर केयर नहीं कर सकते तो वे इसे हौस्पिस में भर्ती क्यों नहीं कर देते? अनिता ने गुस्से में पूछा. इसकी देखरेख के लिए सरकार से जो उन्हें भत्ता मिलता है न, फिर वह बंद हो जाएगा"[21] इस तरह अर्थ ने मनुष्य पर पूरी तरह अपना प्रभाव बनाया है। धन को पाने के लिए ही मनुष्य अपने आप को स्वार्थी बना लेता है कि वह सिर्फ अकेला ही संतुष्ट महसूस करता है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि दिव्या माथुर प्रवासी साहित्य को सामने लाने वाली सशक्त हस्ताक्षर है। प्रवासी जन जीवन के यथार्थ को इन्होंने अपने साहित्य के द्वारा प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया है। अंतः दिव्या माथुर ने 'मेड इन इंडिया और अन्य कहानियाँ' संग्रह में प्रवासी जन जीवन की आर्थिक समस्याओं को बड़ी ही शिद्दत से उभारा है। आधुनिक मनुष्य अर्थलोलुपता के सम्मोहन चक्रव्यूह में फँसता ही जा रहा है। जिसने समाज में कई समस्याओं अथवा कुरीतियों को जन्म दिया है। जिसका स्पष्टीकरण दिव्या माथुर ने अपने इस कहानी संग्रह द्वारा रेखांकित किया है। आदर्श समाज हेतु यथासंभव आर्थिक समस्याओं से निजात पाने हेतु नव मार्ग का संधान किया जाना अपेक्षित है।

संदर्भ-सूची

1. प्रीतम सिंह कैंबो, बरतानवी पंजाबी कविता: एक दृष्टि,(अमृतसर, रवि साहित्य प्रकाशन,1999), पृष्ठ-34
2. दिव्या माथुर, मेड इन इंडिया और अन्य कहानियां, (नई दिल्ली: हिन्दी बुक सेंटर, 2013), पृष्ठ-16
3. वही, पृष्ठ-96
4. वही, पृष्ठ-96
5. वही, पृष्ठ-96
6. वही, पृष्ठ-101
7. वही, पृष्ठ-116
8. वही, पृष्ठ-134
9. वही, पृष्ठ-15
10. वही, पृष्ठ-16
11. वही, पृष्ठ-92
12. वही, पृष्ठ-57
13. वही, पृष्ठ-62
14. वही, पृष्ठ-85
15. वही, पृष्ठ-120
16. वही, पृष्ठ-125
17. वही, पृष्ठ-133
18. वही, पृष्ठ-134
19. वही, पृष्ठ-138
20. वही, पृष्ठ-138
21. वही, पृष्ठ-156

House No. H-3/1507
Chaudhary Hari Singh Nager
Gali No. 3, Near Judge Nagar
Jaura Phatak, Amritsar,Punjab

दलित कहानियों में चित्रित दलित स्त्री की अभिव्यक्ति

अरुणिमा ए.एम

हिन्दी में दलित साहित्य लिखने की परंपरा नौवें दशक से शुरु होती है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि हिन्दी दलित साहित्य का उद्गम मराठी दलित साहित्य से हुआ है,यानी हिन्दी दलित साहित्य पर मराठी दलित साहित्य की संपूर्ण छाप है। पर ये धारणा पूरी तरह सच नहीं है।हिन्दी दलित साहित्य के उद्भव के पीछे नाथ और सिध्द की भूमिका भी है। सिध्द कवियों में बहुत सारे कवि शूद्र थे,वे अपनी तत्कालीन पीडा का परिप्रकाश किया था।इसके मध्यकाल में निर्गुण संत कवि रैदास ने खुद वर्ण व्यवस्था के शिकार होकर इसके खिलाफ आवाज़ उठायी थी।अतः दलित साहित्य मध्यकाल के निर्गुण संत कवि रैदास और कबीर से शुरु होकर हीराडोम और अछुतानंद तक आयी है। समाज में पिछडे हुए, दबा हुआ जो वर्ग है वही है दलित। यहाँ पुरुष या स्त्री दोनों शोषण की शिकार बनी है। केवल स्त्री से जन्म लिया इसी कारण स्त्री को मानसिक एवं शारीरिक पीडाएँ अधिक झेलनी पड़ी है। समाज में एक नारी को कितनी पीड़ाएँ सहन करनी पड़ती है उससे दो प्रतिशत अधिक दलित स्त्री को सहन करना पड़ता है। दलित नारी ने भी जाति के आवरण से बाहर आकर जिंदगी जीना चाहती थी,अच्छे कपडे पहनना चाहती थी। इसलिए वह भी स्वयं अपनी पहचान के लिए लड़ना शुरु किया। नारी एवं दलित नारियों की कुछ अनकही मानसिक पीडाएँ और उनकी अतिजीवन यात्रा के संबंध में इस लेख में लिखने की कोशिश की है।

दलित कहानियों में सामाजिक परिवेशगत पीड़ाएँ, शोषण के विविध आयाम खुलकर और तर्क संगत रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। ग्रामीण जीवन में अशिक्षित दलित का जो शोषण होता रहा है, वह किसी भी देश और समाज के लिए गहरी शर्मिदगी का सबब होना चाहिए था। वैसे तो संपूर्ण प्रतिरोध का साहित्य है, लेकिन कहानी विधा में विरोध प्रतिरोध का तेवर अपेक्षाकृत ज्यादा मुखर और धारदार होता है। इसका कारण यह है कि आत्मकथा जो कि दलित साहित्य की प्रतिनिधि विधा है, व्यक्तिविशेष का संघर्ष गाथा बन जाती है,कविता कवि का आक्रोश, नाटक स्थितियों का बयान। परन्तु कहानी लेखक, पात्रों, घटनाओं, परिवेश आदि का ऐसा समग्र बिम्ब प्रस्तुत कर देता है कि पाठक के चेतन अवचेतन का हिस्सा बन जाती है। पाठक के रूप में कहानी एक मुहिम और उसका एक पैरोकार तैयार करती है। इस अर्थ में आधुनिक दलित कहानी एक उम्मीद जगाती है, एक भाव-संवेदन का वितान रचती है। दलित कहानी के विकास में पिछली पीढ़ी में ओमप्रकाश वाल्मीकि से शुरू करें तो जयप्रकाश कर्दम, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, अनीता भारती, रजनी सिसोदिया, कैलाश वानखेड़े और संदीप मील जैसे कथाकार विरोध-प्रतिरोध का एक विमर्श रचते दिखाई देते है। आधुनिक दलित कहानी में एक नहीं अनेक स्वर है। आज की दलित कहानी में चेतना के धरातल इकहरे नहीं है। दलित कहानी जाती के अलावा, सामाजिक न्याय, साम्प्रदायिक विसंगतियों, प्रशासनिक तालमेल और शोषण के बारीक तंतुओं को भी पकड़ती है। दलित कहानी की कथ्य भूमि पहले से ज्यादा विस्तृत और आन्दोलनधर्मी हुई है। वरिष्ठ लेखक ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'सलाम' जाति व्यवस्था के कुछ अलग स्तरों को दिखाती है।'सलाम' एक साथ जाति-व्यवस्था के कई स्तरों को छूती है। इस कहानी में सवर्ण जाति के कमल उपाध्याय जातिगत उत्पीड़न को झेलता है। एक झटके में ही वह दलित समाज की पीड़ा और दमन का भोक्ता बन जाता है। हरीष पढ़ा लिखा होने के कारण 'सलाम' का विरोध करता है। दलित कहानियों में दलितों के आँसुओं से अनेक जीवन की दुखभरी गाथाएँ दलित लेखकों ने प्रस्तुत की है। इस दलित साहित्य से समाज में चेतना का निर्माण हो रहा है।

कहानियों में चित्रित दलित स्त्री : ओमप्रकाश वाल्मिकि जी का 'यह अंत नहीं' कहानी में एक दलित परिवार में होनेवाले के बारें में व्यक्तकिया है। इस कहानी में बिरमा नामक दलित लड़की के साथ होनेवाले अत्याचार और उसके परिणाम हमें देखने को मिलता है। इस कहानी में गाँव की एक प्रमाणिक का बेटा सच्चिन्दर ने बिरमा को बलात्कार करने की कोशिश की है, उस वक्तबिरमा की भाई किसन और उनका दोस्त शहर से आए थे। बिरमा का भाई किसन शहर में एक कॉलेज में पढ़ रहे हैं। सच्चिन्दर ने बिरमा के साथ जो कुछ भी किया है उस घटना को

सोचकर बिरमा बहुत व्याकुल हो गई और वह उसकी चेहरे से पता चलता था। किसन ने बिरमा की व्याकुलता को देखकर उससे बात की और सब कुछ सुनने के बाद किसन अपने गुस्से को संभाल नही सका। किसन ने अपनी बहन के साथ जो अन्याय हुआ उसके लिए लड़ना शुरु किया। बिरमा के भाई किसन ने पुलिस स्टेशन और पंचायत में जाकर न्याय के लिए लड़ते है। लेकिन कोई फायदा नहीं होता है, पंचायत्तीराज ने सच्चिन्दर को अच्छा बनाकर बिरमा के चरित्र पर सवाल उठाता है। पंचायत्तीराज के मुख्य बताते है कि इस तरह के मामूली केस को लेकर यहाँ मत आओ, बलात्कार थोडी ना किया। यहाँ पर सच्चिन्दर का पिता एक प्रमाणिक हेने के कारण सब लोग सच्चिन्दर के साथ ले लिया। अनपढ़ होते हुए भी बिरमा को अपना भाई किसन और उसके कॉलेज के साथियों की बातचीत सुनकर शोषण को न झेलने की सीख और प्रतिरोध की ताकत मिलती है। एक दलित होने के कारण बिरमा को न्याय नहीं मिला इसके बदले में गाँव के लोगों ने उसे कलंगी स्त्री माना है। लेकिन बिरमा ने आत्मविश्वास के साथ शेष लोगों से कह रहे है कि तुम लोगों ने मेरे विश्वास को जगाया है...इसे मरने मत देना। हिन्दी कहानी में नारी का चित्रण आदिकाल से लेकर अब तक है। रीतिकाल में नारी मात्र विलास की वस्तु थी। आगे चलकर नारी की अस्मिता कहानियों का प्रतिपद्य विषय बना। दलित कहानियों के माध्यम से दुहरा शोषण, बलात्कार, नारी के अस्तित्व का प्रश्न, और दलितों की पूरी तरह के उत्पीड़न का चित्रण किया है।

वरिष्ठ कहानीकार ओमप्रकाश वाल्मीकि जी का कहानी संग्रह घुसपैठिए में संकलित महत्वपूर्ण कहानी है जंगल की रानी । इस कहानी में दलित स्त्री की निडरता और साहसिकता को प्रकाशित किया है। इस कहानी की नायिका कमली अपने स्मान एवं आत्म गौरव को बचाये रखने के लिए अंतिम साँस तक संघर्ष करती है, बाद में लड़ते-लड़ते अपनी जान दे देती है। कमली कभी अपने घुटने नहीं टेकती थी। यह कहानी एक दलित महिला के संघर्ष को मार्मिक ढंग से उठाती है। कमली एक स्कूल में शिक्षिका थी। एक दिन एक डिप्टी साहब प्राइमरी स्कूल का मुआयना करने गाँव आते है। साहब स्कूल का मुआयना कम और स्कूल की शिक्षिका कमली के सौंदर्य का मुआयना अधिक करते है। वह कमली की आंतरिक व बाह्य सौंदर्य से आकर्षित होता है। उनकी चाह कमली को किसी भी तरह हासिल करने में चिंतामग्न थी। डिप्टी साहब ने कमली को फँसाने के लिए एक जाल फेंकता है। उसे ग्रामीण महिला प्रशिक्षण शिविर के लिए शहर भेजता है। वहाँ के एस.पी और विधायक दोनों महानुभवों को भी साहब अपने षड्यंत्र में शामिल करते है। वे तीनों मिलकर उसे बलात्कार करने की पूरी कोशिश की। कमली एक शक्तिशाली संघर्षपूर्ण व्यक्तित्त्व की युवती होने की कारण कमली अपनी अस्मिता तो बचा सकी, किन्तु जान नहीं बचा सकी। अपनी अंतिम साँस तक वह अपने लिए लड़ती थी। बाद में उसकी लाश को नई साड़ी में लपेटकर रेलवे स्टेशन के पास रेलवे लाइन पर फैंक देते है। अंत में इस सारी घटना को सोमनाथ अखबार में छाप देता है और सभी लोगों को बेनकाब कर लेता है। यहाँ कमली के रूप में दलित वर्ग की स्त्री की स्थिति उजागर होती है और उनके प्रति शासन प्रशासन के अंगों की नीयत का यथार्थ चित्रण भी हुआ है। यहाँ कथाकार ने कहानी के माध्यम से दरिद्र व दलित लड़कियों को बलात्कार व हत्या जैसी घटनाओं की शिकार बनाने की घृणाजनक घटनाओं का भंडाफोड़ किया है। साथ ही दलित बालिकाओं पर किए जाने वाले दुराचारों को समाज के समक्ष यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

सहायक ग्रंथ सूचि

1. गिरिराज शरण, दलित जीवन की कहानियाँ, 2002, प्रभात प्रकाशन,4/19 आसफ अलि रोड, नई दिल्ली 110002
2. डॉ. के.संगीता, नारी चेतना की सार्थक तलाश, 2013, गोविन्द पचौरी, जवाहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एण्ड वितरक सदर बाजार, मथुरा 281001
3. कमलेश कुमार गुप्ता, भारतीय महिलाएँ, शोषण, उत्पीडन, एवं अधिकार, 2005, बुक एनक्लेव, जैन भवन, एन.इ,आइ के सामने, शान्ति नगर, जयपूर 302006
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, यह अंत नहीं,2016, पेज क्रम- 21-29, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड जी-17, जगतपुरी, दिल्ली- 110051

डॉ. शोभना कोक्काटन (शोधनिदेशक)

अविनाशिलिंगम इनस्टिट्युट फोर होम सईन्स

एण्ड हयर एजुकेशन फोर वुमेन, कोयम्बत्तूर-641043

E-mail : ponnuarunima7@gmail.com

गिरमिटिया देशों में हिंदी

डॉ.प्रीती.एस

इंसान भावनाओं के हाड़-मांस से बना हुआ एक बौद्धिक पुतला है। चूंकि उसका निर्माण भावनाओं से हुआ है तो फिर जगजाहिर है कि भावनाएँ उसके जीवन के मूल में होंगी। यही भावनाएं इंसान को ईश्वर की कल्पना करने के लिए प्रेरित करती हैं। यही भावनाएँ इंसान को इतनी शक्तिऔर क्षमता देती हैं कि इंसान ईश्वर का विकल्प अपने इर्द-गिर्द खोज लेता है कभी अपने माता-पिता के रूप में तो कभी अपनी मातृभूमि के रूप में। संयोग देखिए!

नियति ने इंसान को उस भावनाओं के साथ उचित व्यवहार करने अथवा उसके आवेग को सार्थक मार्ग प्रदान करने के लिए भाषा की नींव रखी है।

भाषा के बिना किसी जीवन की कल्पना निरर्थक है। मैं ऐसा इसलिए कह रही हूँ कि बात अगर सिर्फ इंसान की हो तो हम उसके किसी पहलू को इंसान तक सीमित रखने की चेष्टा कर सकते हैं। लेकिन बात जब भावना से भाषा तक पहुँचती है तो हम भाषा को सिर्फ इंसानों तक सीमित नहीं रख सकते। प्रमाण के तौर पर आप अपने आस-पड़ोस में किन्हीं जानवरों को देखिए। छत पर उतरते परिंदों को देखिए। उनकी भी अपनी भावनाएँ होती हैं उनकी भी अपनी एक भाषा होती है।"[1]

अर्थात अगर हम ये कहें कि ईश्वर, माँ और मातृभूमि जैसी विराट भावनाओं को समेटने के लिए भाषा की नितांत आवश्यकता होती है तो ये अतिश्योक्ति नहीं होगी।

दुनिया में लाखों संस्कृतियाँ हैं। हजारों देश हैं और उन सबकी करोड़ों भाषाएँ हैं और इस अनन्त कड़ी में एक छोटा सा मोती हमारे हिस्से में भी है जिसे हम सप्रेम हिंदुस्तान कहते हैं और उसकी हृदय में गंगा की पवित्रता की तरह बहती हुई एक प्यारी सी धारा है जिसे हम मुक्त कंठ से हिंदी कहते हैं।

हिंदी हमारे लिए महज भावनाओं को व्यक्तकरने का एक सरतलम जरिया नहीं है बल्कि ये हमारे लिए स्वयं एक भावना है। उदाहरण के तौर पर आप कल्पना कीजिए कि आप देश,काल और परिस्थिति से प्रभावित होकर किसी देश में प्रवासी बनकर गये हुए हैं। एक अन्य संस्कृति आपकी आंखों के सामने खिलखिला रही है परंतु आप उस संस्कृति से अनजान खुद को वहाँ अकेले महसूस कर रहे हैं तभी अचानक आपके कानों में हिंदी का स्वर सुनाई दे। यकीन कीजिए आपका मन जो लक्ष्मण की मूर्छा की तरह सूर्योदय नहीं चाहता था वह भी हिंदी रूपी संजीवनी का स्पर्श पाते ही बाँहें खोलकर सूर्योदय की तरफ दौड़ पडेगा।

अगर फिर भी मेरी बातें आपके मन में क्षण भर के लिए भी किसी संदेह को जन्म दे रही हैं तो आप मेरे साथ एक मानसिक यात्रा पर चलिये और याद कीजिए जब हमारा देश गुलामी के जंजीरों में जकड़ा हुआ था। अंग्रेज का मन हमें लूटने से नहीं भरा तो वह हमें गुलाम बनाने पर आमादा हो गए। उससे भी उनकी राक्षसी इच्छाएं तृप्त नहीं हुईं तो उन्होंने एक नया शब्द ईजाद किया 'गिरिमिटिया!' कहते हैं कि गिरिमिटिया शब्द 'एग्रीमेंट' शब्द से निकला हुआ है।"[2]। लेकिन जब आप थोड़ा शोध करेंगे तो ये चीजें साफ हो जाएँगी कि एग्रीमेंट जैसी बैसाखी के सहारे गिरिमिटिया शब्द भारत के गले में पड़ा हुआ गुलामी का अपडेटेड फंदा था। और फिर अंग्रेजों ने इस गिरिमिटिया शब्द के आतंक को जीवित रखने के लिए हम भारतीयों का दोहन करना शुरू कर दिया। देखते-देखते भारत से बड़ी संख्याओं में लोग हर साल 10 से 15 हज़ार मज़दूर गिरमिटिया बनाकर फिजी, ब्रिटिश गुयाना, डच गुयाना, ट्रिनीडाड, टोबेगा, नेटाल (दक्षिण अफ्रीका) में गुलाम के तौर पर भेजे जाने लगे।

गुलामों की संख्या ऐसे बढ़ी कि कुछ दिन में एकाध देश गिरिमिटिया देश कहलाने लगे। कल्पना करिये ! उस वक्तउन गुलामों के लिए उस देश में सुखद अनुभूति के नाम पर क्या होगा ? मुझे नहीं लगता कि उस वक्तउनकी झोली में मुस्कुराहट के रूप में हिंदी के सिवाय कुछ और होगा,क्योंकि फिर से बात भावनाओं की आएगी और बात जब भावनाओं की आएगी तो भाषा का जिक्र होना लाज़िमी है।

लेकिन उस वक्तबात सिर्फ भावनाओं की नहीं थी यातनाओं की थी। अब सोचिये हिंदी उन गिरिमिटिया मजदूरों के लिए क्या काम करती होगी।

अपने अंतर्मन से पूछिए,आपको जवाब मिलेगा कि हिंदी उस वक्तउन गिरमिटियों के लिए उनके घावों पर एक शीतल लेप का काम करती होगी।

स्थिति बदली, मानवता का कद बड़ा हुआ तो यातनाएं थोड़ी ठिगनी हुईं। परिणामस्वरूप गिरमिटियों का दुःख थोड़ा कम हुआ। लेकिन उनके पास इतने पास इतने पैसे नहीं थे कि वो स्वदेश लौट सकें और जब उनके पास पैसा हुआ तो वो देश,काल और परिस्थिति के हाथों इतने विवश हुए कि वो चाहकर भी स्वदेश नहीं लौट सके।

उन देशों में लोग मजदूर से ओहदेदार बनने लगे। धीरे-धीरे उनसे हिंदी छिटकने भी लगी। लेकिन कहते हैं जो आपके रगों की धमनियों में बस जाता है उसे निकाल पाना असंभव होता है। फिर गिरमिटियों ने प्रदेश की संस्कृति और स्वदेश की हिंदी में सामंजस्य बनाना शुरू किया। परिणामस्वरूप आज उन देशों में हिंदी अपने वजूद का सार्थक उदघोष कर रही है।

देश के बाहर या यूँ कहे भारतेत्तर देशों में हिंदी का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप को को विस्तार प्रदान करने में प्रवासी साहित्यकारों ने सेतु का काम किया है। सभी प्रवासी भारतीय विदेश में अपनी भाषा की रक्षा, संरक्षा, एवं भाषा के प्रति सचेष्ट है, यही कारण है कि सर्वत्र विदेश में जहाँ- जहाँ भारतीय, प्रवासी या अप्रवासी के रूप में गए हैं वे हिंदी बोलने का प्रयत्न करते है और अपनी भाषा एवं संस्कृति पर उन्हें गर्व है। वे अपनी अगली पीढ़ी को हिंदी सिखाना चाहते हैं क्योंकि वही हिंदी उन्हें विदेश में जोड़ने वाली ताकत है।[3] वे गरीब भारतवंशी शोषित, पीड़ित, प्रताड़ित, एवं अपमानित होते हुए भी अपनी संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों को बचाए रखने में सफल रहे साथ ही अपनी भाषागत एकता के मूल्यों को भी बनाए रखने में सार्थक सिद्ध हुए है।

समस्याः गिरमिटिया मजदूरों के इतिहास के माध्यम से यह स्पष्ट रूप से जाना जा सकता है कि वहाँ निवास कर रहे भारतवंशी को विभिन्न प्रकार के मौलिक अधिकारों से वंचित रखा गया। यहाँ तक कि भोजपुरिया समाज खुल कर अपनी भाषा में वार्तालाप भी नहीं कर सकते थे। इस संदर्भ में मॉरिशस के सर्वश्रेष्ठ एवं लोकप्रिय रचनाकार अभिमन्यु अनत ने अपनी सर्वश्रेष्ठ प्रसिद्ध रचना लाल पसीना में लिखा है- "जिस दिन गोरे सरदारों की ड्यूटी की बदली की जाती उस दिन सारे भारतीय मजदूर खुलकर बातें कर पाते।"[4]

वस्तुतः वर्तमान समय में स्थिति यह है कि मॉरिशस क्रियोली और भोजपुरी को छोड़कर वहाँ सभी भाषाएँ पढ़ने लिखने के लिए ही सीखी जाती है। जबकि फिजी में गिरमिटिया हिंदी के नव विकसित भाषा के रूप में फिजी बात, सूरीनाम में सरनामी, दक्षिण अफ्रीका में नेताली हिंदी कहलाए। इनकी संरचना का मूल मुख्य रूप से अवधि, भोजपुरी और खड़ीबोली था जिसमें नए देश की भाषा सत्ता भाषा के शब्द वहाँ की जनभाषा में घुल-मिल गए। श्री जितेन्द्र कुमार मित्तल ने अपनी पुस्तक 'मॉरिशस देश और निवासी' में लिखा है "भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व मॉरिशस में स्थिति यह थी कि भारतीय मूल के सभी मॉरिशसवासियों की साहित्य की भाषा खड़ीबोली हिंदी थी, किन्तु भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वहाँ से आने वालों में प्रांतीयता की भावना और भाषा का उन्माद स्वरूप उत्पन्न हुआ है।"[5]। फलस्वरूप अब हिंदी के बल हिंदी भाषी राज्यों से आये हुए लोगों तक सिमटती जा रही है।

अपनी भाषा हिंदी के प्रति निष्ठा को बचाए हुए है। हिंदी के प्रति उत्कृष्ट लालसा को दर्शाते हुए मॉरिशस के कवि मुनीश्वर लाल चिंतामणि के शब्दों में- "उस आदमी से जाकर कहो कि/मेरी हिंदी भाषा/ एक ऐसी खूबसूरत चीज है/जिसने मेरी संस्कृति को/ अब भी बचाए रखा है..।[6]

भारत में हुए 10 वें हिंदी सम्मलेन में 'गिरमिटिया देशों में हिंदी' विषय पर विचार विमर्श में कहा गया था कि सभी गिरमिटिया देशों में हिंदी की स्थिति सामान्य है। गिरमिटिया देशों ने धर्म और संप्रदाय से उठकर हिंदुस्तानी समाज का विकास किया है।

समाधानः इन गिरमिटिया देशों में हिंदी की समस्याओं में हिंदी के प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी है। भारत इस कमी को दूर करने में सहयोग कर सकता है। हिंदी के अंतरराष्ट्रीय भाषा का मानक विकसित करने पर भी जोर दिया जा सकता है। गिरमिटिया देशों में हिंदी की बोलियों के संरक्षण की आवश्यकता है। भारत सरकार द्वारा गिरमिटिया देशों में हिंदी के अध्ययन के लिए दी जाने वाली छात्रवृत्ति का कोटा बढ़ाए जाने, बच्चों को केवल हिंदी साहित्य नहीं बल्कि बिजनेस - हिंदी, कम्युनिकेशन - हिंदी एवम् टेक्नोलॉजी तथा तुलनात्मक अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति आदि की जरूरत है। एक ऐसा चैनल स्थापित किया जाए जिसमें हिंदी और भारतीय भाषाओं की शिक्षा के लिए बच्चों के रोचक कार्यक्रम हो। यह कार्यक्रम टेलीविजन और स्मार्टफोन के माध्यम से पूरी दुनिया में मुफ्त प्रसारित किया जाए। सांस्कृतिक आदान-प्रदान में हिंदी को विशेष महत्व दिए जाने की भी जरूरत है। भारत में प्रवासी हिंदी साहित्य के अध्ययन को अनिवार्य किया जाना चाहिए और इसके शोध के लिए आर्थिक सहायता भी प्रदान की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाए जाने पर भी जोर दिया जाय।

निष्कर्ष- निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, गुयना, त्रिनिडाड, और टोबैगो आदि विभिन्न प्रवासी देशों में भारतीय मूल के लोगों ने जो सघर्ष किया और बाद में मॉरिशस में या यूँ कहा जाय कि विदेशों में अपनी प्रतिभाओं के झंडे गाड़ें। साथ ही जैसा भी बन पड़ा, उन्होंने हिंदी की मशाल को वहाँ जलाए रखा है। चाहे भाषा के आधार पर हो या बोलचाल के आधार पर या धर्म एवं संस्कृति के आधार पर ही क्यों न हो। इन सबमें अपनी हिंदी भाषा की अस्मिता को बनाये रखने में भारतवंशी मुख्य रूप से सफल हुए है।"[7]।

1. पवन कुमार 'अर्पित' ब्लॉग पोस्ट - अर्पितट्टकीट्टबात
2. 1- तोताराम सनाढ्य की कथा, गिरमिटिया के अनुभव, संपादक- ब्रज विलाश लाल, आशुतोष कुमार, योगेन्द्र यादे, राजकमल प्रकाशन, न्यू दिल्ली, 2012, पृष्ठ संख्या-9)
3. मुनीन्द्र कुमार 'गुरु'-फेसबुक पोस्ट-हिंदी की अंतर्राष्ट्रीयता
4 अभिमन्यु अनत, लाल-पसीना , पृष्ठ संख्या-125
5 श्री जितेन्द्र कुमार मित्तल, मॉरिशस देश और निवासी, पृष्ठ संख्या- 67
6 मुनीश्वर लाल चिंतामणि, मेरी हिंदी, गगनांचल,वर्ष-40,अंक-1-2, जनवरी अप्रैल, 2017 पृष्ठ संख्या-7
7 सीमा दास - ब्लॉगसपोस्ट - गिरमिटिया देशों में हिंदी साहित्य की दशा एवं दिशा और अभिमन्यु अनत का योगदान - सीमा दास

एसोसिएट प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष
हिंदी विभाग
विज्ञान एवं मानविकी संकाय
एस. आर. एम. इंस्टिट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नॉलजी , कट्टनकुलाथुर-603203

साम्प्रत समय में रिश्तों का पोषण

भीखालाल नाथजीभाई प्रजापति

सारः स्वास्थ्य, धन, खुशी और लोग महत्वपूर्ण धन हैं जो हमें पूर्ण जीवन जीने के लिए जीवन में होना चाहिए। यदि इनमें से किसी का भी अभाव है, तो इसका परिणाम अधूरा और दुःखी जीवन होगा। इसलिए सौहार्दपूर्ण संबंधों का पालन-पोषण किया जाना चाहिए। हम सभी आपस में जुड़े हुए हैं और जीवन के क्षेत्रों में एक ही स्थिति में हैं। दूसरों के सहयोग से ही हम एक संतोषजनक और बेहतर जीवन जी सकते हैं। बेहतर रिश्तों को बढ़ावा देने के लिए हमें दूसरों को महत्व देना चाहिए। हमें अपनेपन की भावना पैदा करनी चाहिए। हम जीवन में अकेले नहीं बल्कि समूह में आगे बढ़ सकते हैं। जीवन सदैव सामाजिक है। जीवन कोई द्विप नहीं है, यह आपस में जुड़ा हुआ है। हमारे विचार, शब्द और कार्य दूसरों पर प्रभाव डालते हैं। इसलिए, हमें स्वयं को दूसरों से जोड़ने के लिए प्रेमपूर्ण और मैत्रीपूर्ण विचार रखने चाहिए।

महत्वपूर्ण शब्दः रिश्ते,पोषण, सहयोग, प्रगति, प्रोत्साहन, गुण, प्रेरणा, गलतियाँ, लोग, प्यार, दया, त्याग, सेवा।

प्रस्तावना : जीवन पारस्परिक सहायता पर आधारित है। हमें बेहतर जीवन जीने के लिए असंख्य लोगों द्वारा विभिन्न तरीकों से मदद की जा रही है। शुद्ध भावनाएँ और शुभ कामनाएँ दूसरों को हमारी ओर आकर्षित करती हैं। हमें करुणा, दया-भाव, प्रेम, सहयोग, त्याग और सेवा के गुणों को अपने अंदर समाहित करना चाहिए। ये अदृश्य सूत्र हैं जो सामंजस्यपूर्ण तरीके से दूसरों को हमसे जोड़ते हैं। हम दूसरों को जो देंगे वह हमारे पास वापस आएगा। यदि हम प्रतिदिन दूसरों को खुशी और शांति देने का निश्चय कर लें, तो इससे उनके साथ हमारा रिश्ता मजबूत होगा। उनसे हमें आशीर्वाद मिलता है। जब हमारे जीवन में कोई संकट आएगा तो इन सभी लोगों की शुभकामनाएँ उसकी शक्ति को ख़त्म कर देंगी। हमें असंख्य लोगों का मानसिक समर्थन मिलेगा जो हमारे जीवन में सदमे अवशोषक के रूप में काम करेगा जैसा कि यहाँ विभिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है:

1. लोगों की संगति का आनंद लें: हम सभी सामाजिक प्राणी हैं। हम दूसरों की संगति में रहना चाहते हैं। हम अकेले नहीं रहना चाहते। हमें लोगों के साथ घुलना-मिलना चाहिए और उनकी बात सुननी चाहिए, उनसे सीखना चाहिए, जहाँ भी संभव हो उनकी मदद करनी चाहिए। हमें सामाजिककरण करना चाहिए। दूसरों की संगति में रहकर हम जीवन के कई पहलू सीखेंगे। हम सीखते हैं कि एक-दूसरे के साथ कैसे बातचीत करें और स्नेह कैसे विकसित करें। हम सहनशीलता, समायोजन, सहयोग सीखेंगे। न केवल हम जीवन के बारे में कई सबक सीखेंगे, बल्कि हम उनके साथ जीवन के कई अनुभव भी साझा कर सकेंगे। लेकिन कंपनी बनाए रखते समय हमें चयनात्मक रहना चाहिए। जैसा कि कहा जाता है 'जैसी कंपनी, वैसा व्यक्ति'। यदि हम बुरे लोगों की संगति में पड़ेंगे तो हमारे जीवन के आत्म-विनाश की ओर बढ़ने की संभावना है। इसलिए हमें दोस्ती और संगति चुनने में अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए। साधु-संतों, विद्वानों और बुजुर्गों की संगति से हमें लाभ होगा। हम कंपनी का आनंद लेंगे जब भी हम उनके साथ बातचीत करेंगे तो हमेशा एक बात सीखने का अनुभव होगा। इसलिए, आइए हम किसी कंपनी का चयन करते समय सतर्क और निश्चिंत रहें और ऐसे लोगों की कंपनी का आनंद लें।

2. दूसरों की प्रगति पर खुशी मनायें : हमें दूसरों की प्रगति पर खुशी मनाने में सक्षम होना चाहिए। लोग ढेर सारा पैसा कमाने, चल-अचल संपत्ति अर्जित करने, नए संपर्क स्थापित करने आदि के इरादे से

अलग-अलग व्यवसायों में कदम रखते हैं। इन सभी प्रयासों के पीछे यही मंशा रही है कि जीवन में शांति, खुशी, सांत्वना और सुरक्षा हो। लेकिन जो देखा और देखा गया है वह यह है कि जब किसी व्यक्ति को सभी प्रकार की भौतिक संपत्ति और सुख-सुविधाएं मिल जाती हैं, तो शांति और खुशी की सबसे महत्वपूर्ण संपत्ति उसके जीवन से दूर हो जाती है। वास्तविक प्रगति जीवन में शांति, खुशी, सांत्वना, उमंग-उत्साह और सुरक्षा की सीमा के संदर्भ में मापी जाती है। जीवन में प्रगति और समृद्धि तभी होगी जब व्यक्तियों के जीवन में प्रगति और समृद्धि आयेगी। यदि हमारे पास गरीब व्यक्ति हैं, तो हमारे पास एक गरीब दुनिया होगी। प्रगति और समृद्धि व्यक्तियों की कड़ी मेहनत का परिणाम है। हमें ऐसे लोगों की मदद करनी चाहिए जो दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। इसके बजाय यदि हम ईर्ष्या, अहंकार और बाधा उत्पन्न करने वाली प्रवृत्ति विकसित करते हैं, तो यह न केवल स्वयं को पराजित करना है, बल्कि यह हमारी अपनी प्रगति और दुनिया की प्रगति को रोक देगा। ऐसे विचारों से हम अपने मन को प्रदूषित करते हैं, जिससे केवल व्यर्थ और नकारात्मक विचार ही उत्पन्न होंगे। ऐसे विचार सबसे पहले हमारे स्वास्थ्य और जीवन को नुकसान पहुँचाएंगे। इसके बजाय, यदि हम दूसरों की प्रगति पर खुशी मनाने में सक्षम हैं, तो हमारे अपने जीवन में प्रगति और समृद्धि होगी। हम इस दुनिया को जो देंगे वह हमारे पास वापस आएगा। हम इस दुनिया को जो देते हैं वह हमारा निवेश है। जब हम खुश होते हैं तो उन्हें नैतिक समर्थन, आत्मविश्वास और कड़ी मेहनत के रास्ते पर आगे बढ़ने का साहस मिलता है। इस संसार की प्रगति और समृद्धि इस संसार के असंख्य लोगों की सृजनात्मक, रचनात्मक मेहनत का परिणाम है। आइये आनन्द मनायें।

3. दूसरों को प्रोत्साहित करें : दूसरों को अच्छा बनने और अच्छा करने के लिए प्रोत्साहित करें। दूसरों की टांग खींचने और उन्हें हतोत्साहित करने का प्रयास न करें। ऐसे अनगिनत लोग हैं जो इस दुनिया के कल्याण के लिए अपना योगदान दे रहे हैं। वे हमारे प्रोत्साहन के पात्र हैं। दूसरों के प्रयासों की सराहना करें। प्रोत्साहन के विचार और शब्द हमारे अपने जीवन के अदृश्य प्रेरक हैं। हमारी उपलब्धियाँ और योग्यता हमारे माता-पिता, साथियों, बुजुर्गों, दोस्तों और शुभचिंतकों के विचारों, शब्दों और कार्यों का परिणाम हैं। सही समय पर प्रोत्साहन के एक शब्द और कार्य में हमें आगे बढ़ाने की असीम क्षमता होती है। जिस प्रकार हम कई अन्य लोगों के प्रोत्साहन के कार्यों के प्राप्तकर्ता हैं, उसी प्रकार हमें भी दूसरों को आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसका मूल्यांकन भौतिक मूल्य की दृष्टि से नहीं किया जा सकता। आइए हम दूसरों को प्रोत्साहित करने में उदार बनें। दिन भर में ऐसे असंख्य अवसर आते हैं जब हम दूसरों को प्रोत्साहित कर सकते हैं। जब हम किसी छात्र, कार्यकर्ता, गृहिणी, कलाकार, डॉक्टर, इंजीनियर से मिलते हैं, तो प्रोत्साहन का एक शब्द उन्हें बेहतर प्रदर्शन के लिए प्रेरित करेगा। वास्तव में, यह एक नये जीवन को पट्टे पर देने का कार्य है। प्रोत्साहन देना परोपकार का कार्य है। संबंधित लोगों की प्रगति और खुशी के अलावा कोई उम्मीद नहीं है। जैसे ही सामने वाले की आत्मा में प्रकाश आएगा और उसकी खुशी बढ़ेगी, उसी हद तक इस धरती से दुःख दूर हो जाएगा। इस प्रयास के लिए किसी धन या सामग्री की आवश्यकता नहीं है। एक सकारात्मक मानसिकता पैदा करने की जरूरत है।

थॉमस अल्वा एडिसन की स्कूली शिक्षा मुश्किल से तीन महीने हुई थी। एक दिन जब वह स्कूल से वापस आया तो उसकी माँ ने उसकी जेब में एक नोट देखा। नोट में लिखा था, 'आपका बेटा मूर्ख है जो पढ़ाई नहीं करेगा।' उनकी माँ ने इसे एक चुनौती के रूप में लिया और कहा कि वह अपने बेटे को पढ़ाएंगी, वह जो करना चाहता था उसे आगे बढ़ाने के लिए उसने उसे पूरा प्रोत्साहन और स्वतंत्रता दी और बाकी इतिहास है।

4. दूसरों में अच्छे गुण खोजें : जब लोग दूसरों के बुरे गुणों, बुरे आचरण और बुरे व्यवहार को देखते हैं तो

दूरी बना लेते हैं। हम सभी अनेक अच्छे गुणों से संपन्न हैं। इस संसार में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जिसमें अच्छे गुण न हों। ईश्वर ने मनुष्य को अपनी छवि में बनाया है। भगवान सर्वोच्च कलाकार हैं। यदि हमारी सोच और मानसिकता नकारात्मक है, तो हम आम तौर पर दूसरों का बुरा पक्ष ही देखते हैं। हमारा झुकाव हमेशा दूसरों की भलाई के लिए होता है। लेकिन, अच्छाई की ओर झुकाव होने के बावजूद कई बार हम अपने व्यवहार और वर्तन में नकारात्मक होने को मजबूर हो जाते हैं। हमें अपना नजरिया बदलना होगा, हमें दूसरों के अच्छे गुणों को चुराना चाहिए ताकि हमारे जीवन में ऐसे अच्छे गुणों का विकास शुरू हो सके। इस प्रक्रिया में हम दूसरों के करीब आएँगे और हमारे रिश्ते बेहतर होंगे। समय के साथ दूसरों में अच्छे गुण ढूँढ़ना हमारे जीवन की आदत बन जाएगी। हम बुरे पक्ष को नहीं देखेंगे, भले ही कोई बुरा पक्ष हो, हम अच्छे और बेहतर पक्ष पर ध्यान केंद्रित करेंगे और सभी प्रकार के जुनून और बाधाओं से मुक्त होंगे। हमारे रिश्ते में मधुरता आएगी।

5. दूसरों से प्रेरणा लें : प्रेरणा की उर्जा हमारे चारों ओर है। हमें पक्षियों, जानवरों और मनुष्यों को देखने के लिए उत्सुक रहना चाहिए। यदि हमारा मानसिक दृष्टिकोण सकारात्मक है, तो प्रेरणा की शक्ति हर जगह है। अम्बानी, टाटा, बिड़ला, बजाज। क्रिकेटर, एथेलेट्स, फिल्मी सितारे, उच्च स्कोरर महापुरुष महात्माएँ सभी हमारे लिए प्रेरणा के स्त्रोत हैं। प्रेरणा, महानता और खुशी प्राप्त करने के लिए रचनात्मक, सृजनशील और परिणामोन्मुखी व्यवसायों में सक्रिय होने का एक विचार और आग्रह है। हमारे पास जीवन के सभी क्षेत्रों में ऐसे असंख्य लोग हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों में कई बार असफल हुए और अंततः सफलता प्राप्त की। हम उन लोगों से प्रेरणा ले सकते हैं जिन्होंने कई बाधाओं और असफलताओं के बावजूद महान ऊँचाइयों को छुआ है। असफलताएँ भी सफलता की हिस्सा हैं। हम विभिन्न क्षेत्रों से प्रेरणा ले सकते हैं। प्रेरणा वह अदृश्य भावना है जो हमारे आंतरिक मानव संसाधनों को सकारात्मक उर्जा की बाढ़ लाकर हम जो भी लक्ष्य हासिल करना चाहते हैं उसे प्राप्त कर सकती है। प्रेरणा के असंख्य स्रोत हैं। कुछ लोग प्रकृति से प्रेरणा लेते हैं, कुछ जानवरों से, कुछ सूरज, चंद्रमा और सितारों से, कुछ समुद्र, आकाश, एक बच्चे, एक तितली या कीट आदि से प्रेरणा लेते हैं।

6. गलतियों से सीखें : बहुत से लोग जब कोई गलती करते हैं तो सोचते हैं कि वे ऐसा नहीं कर पाएँगे। वे निराश हो जाते हैं। वे दुःखी हो जाते हैं। वे दोबारा कोशिश नहीं करेंगे। लेकिन, उन्हें यह समझना चाहिए कि असफलताएँ, असफलताएँ नहीं होती हैं और यह जीवन का अंत नहीं है। असफलताएँ सफलता की विभिन्न सीढ़ियाँ हैं। असफलता हमारी शिक्षक है जो हमें जीवन में नई सीख देती है। वस्तुतः जीवन में असफलता जैसी कोई चीज़ नहीं है। हमेशा एक ऐसा अनुभव होता है जो हमें अधिक परिपक्व और विद्वान बनाता है। हमारे प्रयास कभी व्यर्थ नहीं जायेंगे। सफलता के अलग-अलग चरण होते हैं। यदि हम प्रतिबद्ध हैं, तो हमें लगातार प्रयास करते रहना चाहिए और एक दिन हम सफल होंगे। भले ही हमने कुछ गंभीर गलतियाँ की हों, हम असफलता के विभिन्न कारणों की जाँच कर सकते हैं और जीवन के कई नए पहलू सीख सकते हैं। थॉमस अल्वा एडिसन के लगभग हजार बार असफल होने के बाद भी उन्होंने अपने प्रयास नहीं छोड़े। आखिरकार वह बल्ब बनाने में सफल हो गया। उन्होंने कहा कि वह हजारों बार बल्ब बनाने में सफल नहीं हुए, लेकिन इस दौरान उन्हें पता चला कि इतने सारे तरीके बल्ब बनाने के लिए उपयुक्त नहीं हैं। एक व्यक्ति को पत्थर तोड़ने के लिए कहा गया। उसने सुबह आठ बजे से ही पत्थर पीटना शुरू कर दिया। शाम 4 बजे तक वह पत्थर नहीं तोड़ सका। वह थक गया और निराश हो गया और उसने सोचा कि वह पत्थर नहीं तोड़ पाएगा। इस शख्स की कोशिशों को देख रहे एक शख्स ने हथौड़ा मांगा और एक झटके में उसने पत्थर तोड़ दिया। कई मामलों में, जब हम सफल होने वाले होते हैं तो हम हार मान लेते

हैं। इस विशेष मामले में उस व्यक्तिने पत्थर तोड़ दिया । हर बार जब हम प्रयास करते हैं, हम अपने प्रयासों को संचित कर रहे होते हैं और अंततः सफलता हमारी होती है।

निष्कर्ष : गीता का एक कथन है, 'भाग्यशाली वह व्यक्ति है जिसे अपनी पसंद के अनुसार कार्य करने और अपनी क्षमताओं का उपयोग करने का अवसर मिलता है'। हर कोई उत्कृष्ट बनना चाहता है, लेकिन बहुत कम लोग इसके लिए आत्मविश्वास से चलने की जहमत उठाते हैं। इसे प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को अच्छे कर्म करने की आदत अपनानी होगी। हर समय सही काम करें। हालाँकि रिटर्न देर से आ सकता है लेकिन यह प्रक्रिया अपने आप में बहुत कुछ सिखा सकती है। कर्म के सिद्धांत पर विश्वास रखें। सफलता कड़ी मेहनत का परिणाम है। नेक इरादे और विश्व कल्याण की सोच के साथ किए गए प्रयास बेहतर परिणाम देंगे। हमें अपने ऊपर और ईश्वर पर विश्वास रखना चाहिए।

सन्दर्भ :

1. जीवन में उत्कृष्टता-ब्रह्माकुमारीज़, माउंट आबू (राजस्थान)।
2. आध्यात्मिक खजाना - ब्रह्माकुमारीज़, माउंट आबू (राजस्थान)।
3. मूल्यों की खोज - ब्रह्माकुमारीज़, माउंट आबू (राजस्थान)।
4. नैतिक मूल्य, दृष्टिकोण और मनोदशा - ब्रह्माकुमारीज़, माउंट आबू (राजस्थान)।
5. मानवीय मूल्य, नैतिक मूल्य और आध्यात्मिक मूल्य - ब्रह्माकुमारीज़, माउंट आबू (राजस्थान)

शोधकर्ता
इलसास कॉलेज, कला संकाय,
सीवीएम विश्वविद्यालय,
वी.वी.नगर, पिनकोड : 388120,
जिला : आणंद (गुजरात), भारत।
मो. : 9879191592.

कविता

मुस्कराना भूल गई

गोपिका.एम.आर

याद आती हैं वो जिंदगी के
बेशुमार पल, जब मुस्कान होंठों पर
बैठी रहती थी
थक जाती थी वो, लेकिन होंठों पर
ही सो जाया करती थी
कभी होंठों से जुदा नहीं हो पाई थी,
होंठों पर बैठे उसे जीवन भर की
खुशियाँ याद आई थीं।
अपने साथ-साथ औरों के होंठों
पर भी, अपने नन्हे बच्चों को
बैठा आती थी।
लेकिन अब माहौल कुछ बदल चुका
होंठ और मुस्कान हो गए जुदा।
अब तो यादें भी नहीं रहीं,
शायद वो नन्हे बच्चे कहीं किसी
कुंभ के मेले में बिछड़ गए।
उनकी फुदकने की आहटें
कहीं सुनाई नहीं देती,
क्या विरक्ति ने उन्हें घेर रखा है?
नहीं! शायद मैं अब मुस्कराना भूल गई!

प्राध्यापिका
पी.जी. सेंटर
केरल हिंदी प्रचार सभा

वीरांगना झलकारी बाई उपन्यास में राष्ट्रीय चेतना

सुधा.जे

अपने राष्ट्र के प्रति अगाध प्रेम, अपनी संस्कृति, सभ्यता एवं धर्म के प्रति गौरव, अपने देश की सामाजिक धार्मिक और राजनीतिक दशाओं में सुधार के प्रयत्न आदि में राष्ट्रीय चेतना प्रस्फुरित होती है।

साहित्य के अंतरगत राष्ट्रीय चेतना एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसमें राष्ट्र-जन को निर्भीक तेजस्वी और पराक्रमी बनाने के साथ-साथ सही दिशा निर्देश देने का सामर्थ्य भी निहित होता है।

बाबु गुलाब राय ने राष्ट्रीय चेतना की व्याख्या करते हुए लिखा है कि "एक सम्मिलित राजनैतिक धैर्य में बंधे हुए किसी विशिष्ट भौगोलिक इकाई के जनसमुदाय के परस्पर सहयोग और उन्नति की अभिलाषा से प्रेरित उस भू-भाग के लिए प्रेम गर्व की भावना को राष्ट्रीय चेतना कहते हैं।"[1]

हिंदी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों को इसी राष्ट्रीय चेतना को महत्वपूर्ण विषय के रूप में लिया है। हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार मोहनदास नैमिशराय जी ने अपने उपन्यास वीरांगना झलकारी बाई में राष्ट्रीय भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। सवर्ण समाज की महिलाओं के समान दलित समाज की महिलाओं ने भी इतिहास में अपना नाम सुवर्ण अक्षरों में उकेरने हेतु इतिहासकारों को मज़बूर किया। वही वीर महिला है- वीरांगना झलकारी। ऐसी ऐतिहासिक चरित्र को नैमिशराय ने हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

लेखक ने झलकारी बाई उपन्यास में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम इतिहास को अपनी नायिका के द्वारा चित्रण किया है। उन्होंने अपनी रचना में 1857 के संग्राम में लडे इतिहास में आज भूले बिसरे नेताओं का चित्रण किया है। झलकारी बाई के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। कहा जाता हैं कि वह रानी लक्ष्मीबाई की प्रिय सहेलियों में से एक थी। केवल साथी नहीं समर्पित रूप से झांसी की रक्षा में अंग्रेज़ों का सामना भी किया है। पर आज इतिहास के पन्नों में उनका उल्लेख बहुत कम मिलता है। झलकारी एक साधारण दलित परिवार की बेटी थी। दलित परिवार हमेशा शिक्षा से दूर ही रहा है। वर्ण व्यवस्था में दलितों को सबसे निम्न स्थान दिया गया है। झलकारी का विवाह भी एक गरीब परिवार में हुआ था। देश के प्रति प्रेम, बलिदान आदि के कारण झलकारी का इतिहास में खास स्थान प्राप्त हुआ है। लेकिन वर्षो तक वे महत्वपूर्ण तथ्य अंधेरे में पडे थे। यह एक दुखद बात है। लेकिन बाद में कुछ इतिहासकारों ने इसे उजाले में लाने का प्रयास किया। लेखक कहते हैं "दुखद बात यह है कि जाति विशेष के चश्माधारी इतिहासकारों, साहित्यकारों और पत्रकारों में से किसी ने भी दलित समाज की उस वीरांगना झलकारी बाई की खबर नहीं ली थी। भला ही स्वयं उन दलित और पिछडे समाज के लेखक पत्रकार तथा नाट्यकारों का, जिन्होंने छोटी-छोटी पुस्तकें लिखकर इतिहास के उन महत्वपूर्ण तथ्यों को उजाले में लाने का प्रयास किया।"[2] अपने देश की रक्षा के लिए अंग्रेज़ों से वीरांगना झलकारी ने कडा युद्ध किया। इस कर्म निरत महिला का दास्तान है- वीरांगना झलकारी बाई।

उपन्यास में हम देख सकते हैं कि राष्ट्रीय चेतना उनके खून में बह रहा था। गरीब परिवार के होने से रेत में खेलना, रेत में किले बनाने का शौक था। वह शूर वीर थी। मिट्टी से बने किले को बचाने को अपनी जान लगा देती थी। देश की रक्षा अपनी जान से ज्यादा महत्व देकर करती थी। जंगजी बाघ पर आक्रमण करके अपने प्रदेश और साथियों की रक्षा की। इस घटना से पता चलता है कि उसके रंग-रग में वीरता का खून दौड रहा था।

अपनी वीरता से देश की रक्षा करना अपना कर्तव्य समझती थी वह। उसके लिए रानी लक्ष्मीबाई एक प्रेरणा स्त्रोत बन गयी थी। लेखक के मत में वह अभिमानी न थी, पर स्वाभिमानी ज़रूर थी। सदैव स्वयं खुश रहती थी और दूसरों की राजी-खुशी देखना चाहती थी।"[3] उसके भीतर देश-भक्ति का दीपक कभी का जल चुका था। वह रानी तो नहीं थी पर आस-

पडोस में परिवार की इज्जत की अस्मिता और अभूषण थी।

वह बचपन से ही वीर, साहसी, ईमानदार और मेहनती होने के कारण उसमें सैनिक बनने की लगन थी। झांसी राज्य अंग्रेज़ों के हाथ में आ गया। उसी समय रानी की उम्र अठारह साल की थी। अंग्रेज़ों का लक्ष्य झांसी की गद्दी थी। भारत सरकार ने उस समय आज्ञा दी कि झांसी का राज्य ब्रिटिश राज्य में मिलाया जाता है। लेकिन रानी इनकार कर दिया और कहा कि, "मैं अपनी झांसी नहीं दूँगी।"[4] मुलस्वरूप युद्ध की तैयारी करना शुरु किया। रानी के साथ झलकारी भी थी। दुश्मन को खतम करने के लिए रानी के साथ झलकारी भी तैयार रही थी। युद्ध का डंका बजते हुए सुनकर उसकी भुजाएँ भी रण क्षेत्र में जाने को फडकने लगती थीं। तलवारें चलने, गोला फूटने की गूँज होती तो, उसे ऐसा लगता है कोई उसके कानों में कहता है कि, "झलकारी तुझे भी सैनिक बनना है, तुझे देश सेवा करनी है, तुझे अंग्रेजों को अपनी धरती से भगाना है।"[5] ऐसे समय में उसके मन में देश प्रेम की ज्वाला धधकने लगती है। ऐसी विवश परिस्थितियों में दलित समाज के लोगों की बहादुरी और साहस लेखक ने झलकारी बाई द्वारा हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

युद्ध भूमि में दुखद घटना हुई थी। युद्ध लडते लडते झलकारी के पति की मृत्यु हुई। झलकारी दुखी हुई। वह अपने पति के चरणों पर स्पर्श कर तेज़ी से अंग्रेज़ी सेना पर घायल सिंहनी की तरह टूट पडी। उसके मन में युद्ध मारे जाने पति के प्रति दुख नहीं अपितु झांसी की सुरक्षा की चिंता थी। सवर्ण समाज के लोग अंग्रेज़ों की फौज में आकर मिल गये थे लेकिन झलकारी ने अंग्रेज़ों के मन में यह विश्वास स्थापित किया था कि वह झांसी की रानी थी। वह अपना कर्तव्य स्थापित करने के लिए व्यस्त थे लेकिन किसी के सामने अपनी इज्जत के लिए समर्पण नहीं किया। वह निडर है और मौत से नहीं डरती। झांसी को अंग्रेज़ सेना से आज़ाद कराना उसका उद्देश्य था। अंग्रेज़ अफसर ह्यूरोज ने क्रोध से कहा था, "टुम रानी नहीं हाय, झलकारी हाय। हम टुमको गोली मार देगा।"[6] यह सुनकर झलकारी गरजकर कहती है कि, "मार दैय गोली, मोखौं मौत से डर नई लगे।"[7] यहाँ झलकारी की निर्भयता देख सकते हैं।

राष्ट्र चेतना पर प्रेरणा पाकर उसने स्वतंत्रता संग्राम में भाग ली और रानी लक्ष्मीबाई की तरह वेष बदलकर युद्ध करने से रानी की रक्षा भी कर पाई। अंग्रेज़ों को उसकी वीरता पर आश्चर्य हुआ और प्रसन्न होकर सैनिकों को उसे छोड देने का आदेश दिया। राष्ट्र के प्रति उस वीरांगना का कर्तव्य, उसकी वीरता को दर्शकों के समने नैमिशराय ने रखा है। झलकारी स्वतंत्रता, समता, बंधुता एवं न्याय के रास्ते पर चलते और दूसरों को चलने की प्रेरणा भी देते हैं। लेकिन झलकारी दलित समाज से थी, इसलिए इतिहासों में उसके कर्तव्य को नहीं दिखाया गया।

निष्कर्ष में हिंदी साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना एक पावन सरिता की तरह प्रवाहित होती रहती है। परिस्थितियों के कारण इसमें कभी-कभी अवरोध अवश्य उपस्थित होता रहता है, लेकिन इसकी धारा निरंतर गतिशील रही है। दलित उपन्यासकार मोहनदास नैमिशराय जी ने भी अपना उपन्यास के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना का उज्ज्वल रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1, बाबु गुलाबराय, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा सरस्वती प्रकाशन अलहबाद पृ.सं- 91

2, मोहनदास नैमिशराय, वीरांगना झलकारी बाई, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-मुख पुष्ठ से उद्घृत

3, मोहनदा नैमिशराय, वीरांगना झलकारी बाई, राधाकृष्णा प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड, दिल्ली. पृ.सं- 33

4, वही पृ.सं 59

5, वही पृ.सं - 65

6, वही पृ.सं - 101

7, वही पृ.सं - 101

शोधार्थी

सरकारी महिला महाविद्यालय

तिरुवनंतपुरम

मेहरून्निसा परवेज के उपन्यास साहित्य में समाजिक परिवेश

ममता टंडन

सारांश : मेहरून्निसा परवेज ने अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज के नवनिर्माण में योगदान दिया है तथा सामाजिक परिवेश में व्याप्त धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक और दलित समस्याओं पर विचारणीय प्रकाश डाला है। मेहरून्निसा परवेज की भाषा शैली सरल, सहज, प्रवाह पूर्ण तथा प्रानुकूल है। परिदृश्य के अनुसार वर्णनात्मक, चित्रात्मक, विवेचनात्मक, पात्रात्मक, सूत्रात्मक तथा फ्लैशबैक शैली का प्रयोग किया गया है। समकालीन साहित्यकार के रूप में मेहरुन्निसा परवेज ने अपनी लेखनी के माध्यम से नारी की दुर्दशा, सामाजिक समस्या, आदिवासी जनजाति की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है।

प्रस्तुत शोध से स्पष्ट होता है कि साहित्यकार का उद्देश्य केवल साहित्य रचना करना नहीं अपितु समाज में व्याप्त समस्याओं से अवगत कराना तथा समाज को जागृत करना है। लेखिका ने अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम से सामाजिक परिवेश से तीन पहलुओं पर विचारणीय लेखन कार्य किया हैं। उनके साहित्य में सामाजिक अन्याय का विरोध तथा धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक परिवेश में व्याप्त समस्याओं का अत्यंत सजीवता के साथ अंकन हुआ है। मेहरून्निसा परवेज ने कुल छः उपन्यास लिखे हैं। जिनमें लेखिका ने समाज में व्याप्त स्त्री की पराधीनता, धर्मंन्धता, आर्थिक दयनीयता तथा राजनीतिक उथल-पुथल आदि विषय में लेखन कार्य किया है जो समस्यात्मक रूप में सामने आता है तथा समाज की सत्यता को उजागर करता है।

मूल शब्द - धार्मिक ,राजनीतिक ,आर्थिक ,नवजागृति, चेतना, संघर्ष ,मानसिकता।

प्रस्तावना : कहा जाता हैए कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्यकार समाज में व्याप्त परिस्थितियों को जिस रूप में देखते हैं, उसका साहित्य भी उसी रूप में निर्मित होता है। समाज और साहित्य आपस में जुड़े हुए होते हैं। दोनों एक सिक्के के दो पहलू के समान है। साहित्य के बिना समाज की कल्पना करना अन्योन्याश्रित होगा। एक साहित्यकार के लिए समाज ही ऐसा तत्व है जो साहित्य रचना में सहायक सिद्ध होता है।

समाज को सटीक रूप में व्यक्त करने के लिए विद्वानों ने अलग-अलग मत दिए हैं। जैसे डॉ. संपूर्णानंद जी के अनुरूप पुस्तक समाजवाद के अनुसार जिसमें लोग मिलकर एक साथ एक गति से चले, वही समाज है। तात्पर्य है कि उन लोगों की जो समाज के अंग हो, परिस्थिति एक-सी हो, उनके प्रयत्न और उद्देश्य एक °É¹/É ÉÒ°ÉÉ¨ÉÉÉö½ÉÉÉ¹É"[1] अतः एक से अधिक लोगों के समूह आपस में मिलकर समाज का निर्माण करते हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार “समाज वह व्यवस्थित मानव समुदाय है जिसमें सब लोग सम्यक प्रकार से अपने कर्तव्यों का संपादन करते हुए व्यवस्थित ढंग से रह सके।”[2] प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामाजिक आवश्यकताओं के लिए एक दूसरे से पारस्परिक संबंधित रहते हैं। समाज के बिना व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं होता। यह एक सर्वभौमिक प्रक्रिया है जो परस्पर चलती रहती है।

मेहरुन्निसा परवेज के उपन्यासों में सामाजिक परिवेश के विविध रूप- समकालीन उपन्यासकार मेहरुन्निसा परवेज ने समाज को केंद्रीय विषय बनाकर उपन्यास लेखन कार्य किया है। इनके उपन्यास में जीवन से जुड़ी मार्मिक घटनाओं का सजीव चित्रण देखने को मिलता है। उन्होंने सामाजिक जीवन के प्रत्येक पक्ष को गहनता से प्रस्तुत किया है। घर परिवार, सामाजिक ,आर्थिक ,राजनीतिक, धार्मिक, रीति.रिवाज, मान्यताएँ, स्त्री पुरुष, जीवन संघर्ष, बदलते जीवन मूल्य आदि पर गहनता पूर्वक विचार किया गया है।

धार्मिक परिवेश : मनुष्य द्वारा बनाए गए नियम जिन पर चलने से नैतिकता तथा धार्मिकता की भावना का विकास होता है धर्म कहलाता है। कोई भी सभ्य

समाज बिना धर्म के अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित नहीं कर सकता। हिंदी साहित्य के माध्यम से पाठक धार्मिक रीति-रिवाजों तथा मान्यताओं से परिचित हो पाया है। धार्मिक चेतना के विकास में एक साहित्यकार की मुख्य भूमिका होती है। साहित्यकार अपनी लेखनी के माध्यम से समाज को जीवन की वास्तविकता से परिचित कराने में सहायता करता है। समकालीन साहित्यकार मेहरुन्निसा परवेज के साहित्य पर ध्यान केंद्रित किया जाये तो सामाजिक समस्याओं को निर्भीकता के साथ उजागर किया गया है। धर्म पर विश्वास रखने वाली परवेज जी धर्म के नाम पर हो रहे अत्याचार का खुलकर विरोध करती है। आज समाज में जहाँ परमात्मा पर विश्वास करने वाले लोग हैं वही परमात्मा के अस्तित्व को नकारने वाले लोग भी है। भारतीय संस्कृति में धर्म ही ऐसा स्वरूप है जो मानव जीवन को मानवता से परिचित कराता है परंतु आज समय बदल रहा है। धार्मिक मूल्यों में परिवर्तन दिखाई पड़ता है। धर्म के नाम पर अत्याचार का बोलबाला है। मानव मूल्य में विघटन के साथ-साथ धर्म कहीं शून्य में खोता जा रहा है।

धर्म का एक विपरीत स्वरूप आंखों की दहलीज उपन्यास में सिद्दीकी साहब के माध्यम से प्रस्तुत किया गया जो आधुनिक खुले विचरों वाले व्यक्ति है जो धर्म कर्म से कोसों दूर है। सिद्दीकी साहब की बेटी तालिया और जावेद भी आधुनिक विचारों वाले व्यक्तिहै। जावेद मजार और तीर्थ स्थान बनाने के लिए लुटे जाने वाले पैसे से गरीबों की भूख मिटाना उचित समझता है। धर्म के विषय में जावेद कहता है "मौलाना साहब, सुकून तो मुझे न मन्दिर में मिलता और न मस्जिद में मुझे तो खुले आसमान तले जमीन पर सुकून मिला। खुदा हमारे पास है। हमें उसके पास जाने के लिए न मजारों की धूल चाटने की जरूरत है, न बलियों की सिफारिश की। बड़े अफसोस की बात है। दुनिया कहाँ से कहाँ पहुँच रही है और अभी आप लोगों को खुदा के पास जाने का रास्ता नहीं मिला।"[3] इस उपन्यास के माध्यम से लेखिका कहती है कि धर्म चाहे कुछ हो खुदा या भगवान चाहे हो या ना हो, पर इतना जरूर है कि आदमी अगर उसे मानने लगे तो बुराई से बच सकता है।

'उसका घर' उपन्यास में धार्मिक कट्टरता के कारण एक माँ अपनी ही बेटी का घर बसने नहीं देती क्योंकि देव और रेशमा अंतरजाति विवाह करना चाहते हैं। अतः इस विवाह के लिए रेशमा को अपनी माँ की मृत्यु का इंतजार करना पड़ता है। इस उपन्यास में धार्मिक मान्यताओं पर विचार-विमर्श देखने को मिलता है। लोग खुद को कितना भी नास्तिक क्यों ना कह ले परंतु मृत्योपरांत धर्म और समाज के नियमो के अनुरूप ही दफन होना पड़ता है। मनुष्य जीते जी अपने नियमों पर चलता है परंतु मरने के बाद धर्म और समाज के बनाए गए नियम चलते हैं।

समाज अंधविश्वास में जकड़ा हुआ हैं जिसे लोग प्राचीन परंपरा या संस्कार का नाम देते हैं। कोरजा उपन्यास में मुस्लिम समाज की एक परंपरा का वर्णन किया गया है कि खुदा के यहाँ अपना सही बनाने के लिए क्या-क्या तरीके किये जाते हैं। "जगदलपुर में ग्यारहवीं के महीने में फकीरों को ढूँढना पड़ता है। कौन फकीर है? सभी तो गरीब लोग हैं। आज अच्छे-अच्छे घर के लोग क्या अमीर रह गए हैं? बस बाहर से लीपापोती, अंदर वही धँसती हुई जमीन है। उँगली पर गिनने के लिए दो-चार फकीर हैं इसलिए छोटे घर के लोग जो रोज रोटी कमाते और खाते हैं इस महीने में फकीर बन जाते हैं। ग्यारह फकीरों की रस्म पूरी करनी होती है। आज के जमाने में तो सब फकीर हैं। और इस महीने में इन छोटे लोगों के दिमाग भी इतने चढ़े रहते हैं कि दो दिन पहले से ही इनकी खुशामद करनी पड़ती है। तब कहीं खाने पर सही समय पर ये आते हैं।"[4] ऐसे झूठे आडंबरों और नियमों में धर्म प्रधान देश जकड़ा हुआ है।

'अकेला पलाश' उपन्यास में तहमीना तुषार से कहती है। आप इतने धार्मिक है। तुषार कहता है कि धर्म "यह मुझे बांधे रखता है भटकने नहीं देता, धर्म की आड़ में मन का बहुत सा विकार दूर हो जाता है। वैसे इसमें कुछ नहीं है बस विश्वास है जो मन को बांधे रखता है।"[5] तुषार के मन में धार्मिक प्रवृत्ति उसके पिता की देन है। वह रोज सुबह पूजा करता है। हफ्ते में दो दिन उपवास रखता है। बीच में कोई तीज त्योहार पड़ जाए सो अलग। तहमीना मुसलमान होते

हुए शिव मंदिर जाती है और कहती है कि "मंदिर जाने से क्या मेरा धर्म नष्ट हो जाएगा। धर्म क्या इतने कच्चे होते हैं"[6] तहमीना का मानना है कि सच्चे धर्म में कोई भी विभाजन रेखा नहीं होती। इस उपन्यास में धर्म के नाम पर हो रहे आश्रमों में अनैतिक कार्य पर भी प्रकाश डाला गया है। विमला आश्रम में हुए अनैतिकता का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। आश्रम के नाम पर गुरु संन्यासी लोग लड़कियों को भोग स्वरूप उपयोग करते हैं। आश्रम के जरिए बड़े-बड़े राजनीतिक क्षेत्र में अनैतिक कार्य होते हैं। विमला कहती है कि "मुझसे कहा गया कि तुम संन्यासी बनकर दूसरी जगह जाओ, जहाँ तुम्हें जासूसी का काम करना होगा, और माल इधर से उधर भेजना पड़ेगा। मैंने जब इंकार कर दिया तो मेरे सारे वस्त्र उतार कर मुझे रस्सियों से बांध दिया। भूखे-प्यासे मुझे चार दिन रखा गया और फिर उसी रात दस व्यक्तियों ने मेरे साथ बलात्कार किया। दुख, पीड़ा और शोक से मेरी आत्मा त्राहि-त्राहि करने लगी।"[7] एक सहेली के माध्यम से विमला आश्रम से भागने में सफल हुई लेखिका ने धर्म के नाम पर हो रहे अत्याचार का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में धर्म के अनेक पक्ष देखने को मिलते हैं। डॉ. नाहिद और महेश के अंतरजाति विवाह को रूढिगत माँ के ताने का शिकार होना पड़ता है। धार्मिक कट्टरता, जाति-पांति, छुआ-छूत ने मानव मूल्यों को नष्ट कर दिया है।

'समरांगण' उपन्यास में धर्म के नाम पर कश्मीरी पंडितों पर हुए अत्याचार को दर्शाया गया है। नायक प्रधान इस उपन्यास में धर्म ग्रंथों तथा महापुराणों के विषय मे चर्चा की गई है जो उपन्यास में व्याप्त धार्मिकता को प्रदर्शित करता है सुहासिनी अपने बेटे को धर्म के विषय में समझाती हुई कहती है कि "बेटा, धर्म ग्रंथों से ही तो हमें उर्जा मिलती है, आचरण करने की सीख मिलती है जब हम उसे आदर्श मानते हैं तो उन बातों को कैसे नकार सकते हैं, झुठला सकते है। पुरुष के हाथ में सत्ता है, वही इस सृष्टि का रचयिता है, इस बात को कैसे भूले?"[8]

'पासंग' उपन्यास में कनी की दादी उसकी माँ के पुनर्विवाह को कभी स्वीकार नहीं कर पाती। इसे धर्म के विरुद्ध समझकर कनी को कभी उसकी माँ से मिलने नहीं देती। धर्म मानव जीवन का अभिन्न अंग है। धर्म को समाज से कभी अलग नहीं किया जा सकता परंतु धर्म के नाम पर हो रहे अत्याचार को समाप्त करने का प्रयास अवश्य किया जा सकता है।

आर्थिक परिवेश : लेखिका ने अपने उपन्यास में मध्यम वर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति का चित्रण किया है। आर्थिक परिस्थिति का सामना करता हुआ मनुष्य किस प्रकार गुजर-बसर कर रहा है, यह जानने के लिए लेखिका जिज्ञासु रहती थी। कस्बाई लोगों व आदिवासी जनजाति के लोगों की आर्थिक स्थिति का वर्णन उनके उपन्यास में देखने को मिलता है।

'कोरजा' उपन्यास में आर्थिक परेशानियों का विकराल रूप देखने को मिलती है। मुनीम के पास नानी का घर और खेत गिरवी है जिसे छुड़ाने के लिए वह साजो का सौदा करता है। अतः साजो आर्थिक रूप से परेशान होकर रोज रात को मुनीम के घर जाने को मजबूर हो जाती है। आर्थिक तंगी के संदर्भ में लेखिका लिखती है कि "चार आने से कम में तो कोई चीज नहीं मिलती है महंगाई के मारे तो नाक में दम आ गया है। पेट को खाये या तन ढांके जितना कमाते हैं दो टाइम की पेट की आग में ही चला जाता है"[9] इस उपन्यास में आर्थिक परेशानी का अलग-अलग स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। नानी के लिए दो वक्त का खाना जुटाना मुश्किल हो जाता है। कभी भर पेट भोजन भी नसीब नहीं हुआ। माध्यमवर्गीय परिवार का पैसे के अभाव में पारिवारिक ढांचा ही डगमगा जाता है आर्थिक तंगी से पारिवारिक संबंधों का टूटता स्वरूप कोरजा उपन्यास में देखने को मिलता है।

'अकेला पलाश' उपन्यास में विमला के माध्यम से आश्रम में हो रहे आर्थिक शोषण को उजागर किया गया है तथा इस उपन्यास में दिखाया गया है कि "गाँव की कुछ औरतें चावल का कोंडा, जिसे गाय-भैंसों को खिलाया जाता है, उसे बारीक छानकर और मोटी-मोटी हाथ से रोटी बना रही थी। उसे देखकर आश्चर्य लगा था कि कोंडे की रोटी कैसे खाई जा सकती है? क्या इन्सान गाय भैसों की श्रेणी में आ गया है? सच है पेट की आग बुझाने के लिए क्या- क्या नहीं करना

पड़ता।"[10] आर्थिक परेशानी से जूझता एक छोटा बच्चा होटल में काम करते हुए जूठी रोटी खाता है। इस उपन्यास में विपुल शिक्षित बेरोजगार है जो आर्थिक अभावों में माँ के जेवर बेच कर नौकरी के लिए ठोकर खाता है। बेरोजगारी समाज की भयावह समस्या है जिसे विपुल के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

'समरांगण' उपन्यास में गोपीलाल रोजी-रोटी की तलाश में दिल्ली से जबलपुर आता है। आर्थिक रूप से मजबूत होने के लिए वह व्यापार के साथ साथ अंग्रेजों के बुरे कार्य में भी साथ देता हैं। अंग्रेजी सभ्यता में पला बढ़ा मोहन भी आर्थिक रूप से कमजोर गरीबों को घृणा की दृष्टि से देखता है "मोहन को गरीबी, लाचारी से घृणा थी। उसकी छोटी बुद्धि में यह बात समा गई थी कि गरीबी मनुष्य के विकास में सबसे अधिक बाधक होती है। घुन की तरह मनुष्य को खा जाती है, और उसे खोखला करके फेंक देती है। इस बाधक रोड़ों को निकाल फेंकना चाहिए। भारत की गरीबी उसे पसंद नहीं थी। मन हमेशा इंग्लैंड के वैभव में बिताता रहता था।"[11] गोपीलाल पैसों की लालसा में न जाने क्या क्या कार्य करता है। अंत में सब कुछ छोड़ कर वापस दिल्ली चला जाता है। आर्थिक तंगी से समृद्ध होने तक का सफर गोपीलाल को रिश्ते नातों से कंगाल कर देता है। अंत में उसका साथ देने वाला कोई नहीं होता।

आर्थिक परेशानी के कारण ही पारिवारिक जीवन में बिखराव उत्पन्न होता है। अभावग्रस्त मानव जीवन के मूल्यों को भूल जाता है। पेट की आग को बुझाने के लिए गलत कार्य करता हैं। लेखिका ने अपने उपन्यास में मध्यम वर्गीय परिवार को केंद्र बिंदु मानकर अपनी रचनाओं में आर्थिक अभाव के कारण मानव जीवन की परेशानीयो तथा खत्म होते संबंधों का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है।

मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यासों के माध्यम से राजनीति के घिनानेपन को उजागर करने का प्रयास किया है।

'कोरजा' उपन्यास में राजनीति के खेल को राशन कार्ड के माध्यम से उजागर किया गया है। "ए,बी,सी जहाँ ए उच्च वर्ग के लोगों के लिए ,बी मध्यमवर्गीय तथा सी गरीबों के लिए सरकार भी जानती है। गरीब लोग को कौन सा रोज हलवा ,खीर खाने के आदी होते हैं? यह चीजें तो रईसो की रसोई में जाकर कैद हो गई है।"[12]

'अकेला पलाश' उपन्यास में भ्रष्ट राजनीति के कई रूप देखने को मिलते हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक को नौकरी के लिए पूंजीपतियों, मंत्री, बड़े अफसरों की सिफारिश की जरूरत होती है। विपुल को एक उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक के रूप में चित्रित किया गया है। वह कहता है कि "मेरा फर्स्ट आना, एन.सी.सी. में टॉप लेना खेल-कूद में बढ़िया सर्टिफिकेट पाना सब बेकार हुआ । हाँ, लेकिन इतनी बात तो समझ आ गई कि आदमी के पास कोई सर्टिफिकेट न हो तो चलेगा, पर सिफारिश का उत्तम सर्टिफिकेट होना जरू री है।.......।"[13] तहमीना दफ्तर के समय पर ना खुलने का विरोध करती है और सही समय पर दफ्तर खोलने को कहती है। कार्यालय के बाहर गंदगी की सफाई के लिए आग्रह करती है तथा विमला के माध्यम से आश्रम में हो रहे भ्रष्टाचार नीति को उजागर किया गया है।

'समरांगण' उपन्यास में कश्मीरी पंडितों पर हुए अत्याचार को दर्शाया गया है। "दिल्ली में राजनीतिक वातावरण काफी पहले से खराब था। भीतर-ही-भीतर आग सुलग रही है, यह सभी समझ रह थे। विस्फोट इतना जल्दी होगा सोचा नहीं था।"[14] दिल्ली में उत्पन्न दंगे ने जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया "मनुष्य ही मनुष्य का दुश्मन हो गया था। रिश्ते, नाते, दोस्ती, भाईचारा जैसी बातों का कहीं स्थान न था। सब बस एक दूसरे के प्यासे हो गए थे।"[15]

देश विभाजन के साथ-साथ राजनीति का रुख ही बदल गया। आम जीवन अव्यवस्थित हो गया हिंदू हो या मुस्लिम लोगों के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। दंगो के कारण मानव जाति में हुए प्रभाव को मेहरुन्निसा परवेज ने 'पासंग' उपन्यास के माध्यम से दर्शाया है। इस उपन्यास में हिंदू-मुस्लिम आपसी टकराव और मतभेद को चित्रित किया गया है। दंगे भड़काने वाले नारे का विरोध किया गया हैं। बंटवारे के बाद भी

लोगों के मन में भरी कड़वाहट को दर्शाया गया है। आदमी राजनीतिक जोश में होश खोकर जातिवाद के बीच घिरा हुआ है। आज राजनीति जनता के हित के लिए नहीं। अपितु अपने स्वार्थ सिद्ध करने के लिए जाने लगी है। राजनीतिक नेता गण समाज की प्रगति के नाम पर अपनी प्रगति पर ध्यान केंद्रित किए हुए हैं।

मेहरुन्निसा परवेज समकालीन हिंदी लेखन जगत की अग्रणी लेखिका है। मेहरुन्निसा परवेज ने कहानी, उपन्यास, कविता के माध्यम से साहित्य जगत में अपनी कलम से जादू चलाया है। उन्हें लेखन की प्रेरणा पिता से प्राप्त हुई हैं। उन्होंने रोजमर्रा के दैनिक जीवन में आने वाली सामाजिक समस्याओं को अपनी कृतियों के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। उनकी कृतियों में महिलाओं की पीड़ा और मनोविचार उभर कर सामने आए हैं।

मेहरुन्निसा परवेज का उपन्यास समाज प्रधान है। समाज मे घटने वाले विभिन्न आयामों को उपन्यास के माध्यम से पाठक तक पहुँचाने का कार्य किया गया है। मेहरुन्निसा परवेज ने अपने उपन्यास साहित्य से हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। मेहरुन्निसा परवेज के उपन्यासों की कथावस्तु मनुष्य के जीवन की विकट समस्याओं की व्याख्या करने में तथा जीवन की अव्यवस्था को यथार्थ रूप में चित्रित करने में सक्षम है।

आधुनिक युग के उपन्यासों की शैली और विषयवस्तु में पूर्व प्रयासों की अपेक्षा परिवर्तन दिखाई देता है। अत्याधुनिक युग के उपन्यासों में सामाजिक पक्ष उभर कर सामने आया है। इस उपन्यासों में विचारों की गहराई दिखाई देती है। यह काल्पनिक ना होकर यथार्थ जीवन से सीधे संबंध रखती है।

निष्कर्ष : उपरोक्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला जा सकता है कि मेहरुन्निसा परवेज एक उत्कृष्ट लेखिका हैं, जिन्होंने मनुष्य जीवन, सामाजिक क्षेत्र और साहित्य क्षेत्र में उत्क्रमणीय योगदान दिया हैं। इनकी रचनाओं पर अपने व्यक्तित्व की एक गहरी छाप मिलती हैं। मेहरुन्निसा परवेज एक सवेदनशील एवं नारी प्रधान लेखिका होने के कारण इनके कथा साहित्य रचनाओं में भावना, भाव विचार, पीड़ा आदि जन-मानस से प्रत्यक्ष सम्बन्ध जोड़ते दिखाई देते है। साथ ही साथ इनके रचनाओं में नारी के स्थूल रूप भी अधिकांश रचनाओं मे देखने को मिल रहा है। लेखिका ने अपने उपन्यास के माध्यम से सामाजिक परिवेश के विविध पहलुओं को सकारात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। उन्होंने समाज में व्याप्त समस्याओं पर विचारणीय प्रकाश डाला है।

संदर्भ सूची

1. संपूर्णानंद, समाजवाद पृ.क्र.19
2. शुक्ल रामचंद्र, विश्वप्रापच की भूमिका पृ.क्र. 9
3. परवेज़ मेहरुन्निसा, आँखों की दहलीज अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, पृ.क्र. 67
4. परवेज़ मेहरु न्निसा, कोरजा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 61
5. परवेज़ मेहरु न्निसा, अकेला पलाश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 129
6. परवेज मेहरु न्निसा, अकेला पलाश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 61
7. परवेज मेहरु न्निसा, अकेला पलाश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 63
8. परवेज मेहरू न्निसा, समरांगण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.क्र. 71
9. परवेज मेहरु न्निसा, कोरजा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 99
10. परवेज मेहरु न्निसा, अकेला पलाश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र. 55
11. परवेज मेहरू न्निसा, समरांगण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.क्र. 69
12. परवेज मेहरून्निसा, कोरजा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1977 पृक्र. 138
13. परवेज मेहरु न्निसा , अकेला पलाश वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.क्र.48
14. परवेज मेहरू न्निसा, समरांगण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.क्र. 10
15. परवेज मेहरू न्निसा, समरांगण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.क्र. 11

शोध निर्देशकः **सुनीता शशिकांत तिवारी**
शोधार्थी
कला एवं मानविकी अध्ययनशाला,
हिंदी विभाग,
मैट्स विशवविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

शिक्षा के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन

ब्रिजेशकुमार बी. चौधरी

सारांशः सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक विकास के साधन के रूप में शिक्षा की भूमिका को आज व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त है। मैकाइवर के अनुसार सामाजिक परिवर्तन सामाजिक और गैर-सामाजिक वातावरण में होने वाले कई प्रकार के परिवर्तनों की प्रतिक्रिया के रूप में होता है। शिक्षा मनुष्य के दृष्टिकोण में बदलाव लाकर सामाजिक परिवर्तन की शुरुआत कर सकती है। फ्रांसिस जे ब्राउन की टिप्पणी है कि शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के व्यवहार में परिवर्तन लाती है।औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा निर्विवाद रूप से मूल्यों, दृष्टिकोणों, व्यवहारों और कौशलों को आकार देने का सबसे प्रभावी तरीका है जो एक एकीकृत विश्व समाज में प्रभावी ढंग से कार्य करना संभव बनाता है। व्यक्तिगत सामाजिक कौशल में सुधार के लिए शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण साधनों में से एक है। शिक्षा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षार्थियों को स्कूल में या स्कूल के बाद सामाजिक कौशल विकसित करने का अवसर देती है, शिक्षार्थी अन्य शिक्षार्थियों/लोगों के साथ बातचीत करते हैं, दोस्तों के साथ अपने संबंध बनाते हैं। विभिन्न आयु और संस्कृतियों के शिक्षक और छात्र अपने कौशल में सुधार करते हैं।इसलिए, सामाजिक विकास शिक्षा और स्कूल के माहौल में दूसरों के साथ सफलतापूर्वक बातचीत करने की क्षमता के साथ संबंधित है।अच्छा संचार कौशल होना, गहरी मित्रता विकसित करना और परिवार-मित्रों के समर्थन का एक नेटवर्क बनाना शामिल है और ये सभी शिक्षा प्रणाली द्वारा विकसित और समृद्ध हैं।

प्रस्तावनाः डा.राधाकृष्णन के शब्दों में- "शिक्षा परिवर्तन का एक साधन है जो कार्य समाज में परिवार, धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं द्वारा होता था वह आज शिक्षा संस्थाओं द्वारा किया जाता है।"

भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए सभी स्तरों पर और सभी उम्र के बच्चों के लिए शिक्षा ही एकमात्र उपाय है। शिक्षा को समाजीकरण की एक प्रमुख संस्था के रूप में स्वीकार किया गया है, और शिक्षकों और शैक्षणिक संस्थानों को समाजीकरण कार्यकर्ता के रूप में। शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन के बीच संबंध दोहरा रूप धारण कर लेता है- शिक्षा एक साधन के रूप में और शिक्षा एक उत्पाद के रूप में। इसका तात्पर्य यह है कि शिक्षा का उपयोग समाज में वांछित परिवर्तन लाने के लिए एक साधन के रूप में किया जाता है और बाद के मामले में शैक्षिक संरचना में परिवर्तन उन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप होता है जो समाज में पहले ही हो चुके हैं।

शिक्षा समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है और ऐसे विचारों का प्रचार करती है जो जीवन के सभी क्षेत्रों में सामाजिक परिवर्तनों को बढ़ावा देते हैं। विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के नियंत्रण में शैक्षिक संस्थान उन समूहों के मूल्यों को दर्शाते हैं जो शिक्षा का समर्थन और नियंत्रण करते हैं। इस स्थिति में, शिक्षक बच्चों को विशिष्ट मूल्य, आकांक्षाएँ और दृष्टिकोण प्रदान करते हैं।

1. सामाजिकपरिवर्तनः सामाजिक परिवर्तन वह शब्द है जो सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक प्रतिमाना सामाजिक परस्पर सम्बन्धी क्रिया या सामाजिक संगठन के किसी अंग में अन्तर या रूपान्तर को वर्णित करने के लिए प्रयोग किया जाता है। '-जॉन्स

"सामाजिक परिवर्तन का अर्थ है लोगों के कार्य करने तथा विचार करने की प्रणाली में संशोधन।" -एम.डी. जेनसन

2.शिक्षाः बॉसिंग के अनुसार, "शिक्षा का कार्य व्यक्ति का वातावरण के साथ उस सीमा तक अनुकूल न कराना है जिससे व्यक्तितथा समाज दोनों के लिए स्थायी सन्तोष प्राप्त हो सके।"

कौटिल्य बताते हें कि शिक्षा मानव को एक सुयोग्य नागरिक बनाना सिखाती है तथा उसका व्यक्तिगत विकास करती है ।

शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन की यह संकल्पना दर्शाती है कि प्रजातन्त्र में व्यक्ति का विशेष स्थान है अतः शिक्षा काअर्थ समाज तथा व्यक्तिके हितों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। व्यक्ति तथा समाज दोनों पर बल दिया गया है।

शिक्षा और सामाजिक व्यवस्था : सामाजिक संरचनाएँ एक सामाजिक समूह के भीतर संस्थाओं के निर्मित ढाँचे हैं जो उनके सदस्यों के व्यवहार और पहचान को आकार देते हैं। सामाजिक संरचना के घटक संस्कृति, सामाजिक वर्ग, सामाजिक स्थिति, भूमिकाएँ, समूह और संस्थाएँ हैं।समाज के भीतर सामाजिक संरचना तीन स्तरों पर काम करती है: मैक्रो, मेसो और माइक्रो स्तर।

समाजशास्त्री 'सामाजिक संरचना' को सामाजिक संस्थानों और संस्थागत संबंधों के पैटर्न सहित मैक्रो स्तर की सामाजिक ताकतों का उल्लेख करते हैं। समाजशास्त्रियों द्वारा मान्यता प्राप्त प्रमुख सामाजिक संस्थानों में परिवार, धर्म, शिक्षा, मीडिया, कानून, राजनीति और अर्थव्यवस्था शामिल हैं।सामाजिक संस्थाओं और संस्थागत सामाजिक संबंधों द्वारा आयोजित सामाजिक नेटवर्क में 'मैक्रो' और 'माइक्रो' स्तरों के बीच 'मेसो' स्तर पर मौजूद सामाजिक संरचना को देखा जा सकता है।सामाजिक संरचना माइक्रो स्तर पर मानदंडों और रीति-रिवाजों के रूप में एक-दूसरे के साथ होने वाली रोजमर्रा की बातचीत में प्रकट होती है।

व्यक्तिगत सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण साधनों में से एक है।

1) सामाजिक परिवर्तन की एक आवश्यक शर्त के रूप में शिक्षा- उन्नत देशों के ऐतिहासिक अनुभव ने दिखाया है कि किसी भी सामाजिक क्रांति के लिए शिक्षा पूर्व शर्त है।

2) सामाजिक परिवर्तन के परिणाम के रूप में शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन के बीच अन्योन्याश्रित संबंध है। एक ओर यह सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन लाता है। दूसरी ओर यह सामाजिक परिवर्तन से प्रभावित होता है, अर्थात सामाजिक परिवर्तन शिक्षा के प्रसार में सहायक होता है। शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का अनुसरण करती है।

3) सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में शिक्षा- शिक्षा सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण और पारंपरिक दृष्टिकोण को बदल देती है।शिक्षा न केवल समाज की सांस्कृतिक परंपराओं अर्थात् रीति-रिवाजों, परंपराओं और मूल्यों आदि को संरक्षित करती है बल्कि उन्हें अगली पीढ़ी तक पहुँचाती है।

इस तरह शिक्षा का माध्यम व्यक्तिको सामाजिक परिवर्तन और कौशल विकसित करने का अवसर देती है। इसलिए, सामाजिक परिवर्तन और विकास का संबंध शिक्षा और व्यक्तिकी दूसरों के साथ सफलतापूर्वक बातचीत करने की क्षमता से है। इसमें दूसरों और स्वयं के प्रति सम्मान दिखाना,अच्छे संचार कौशल रखना, गहरी दोस्ती विकसित करना और परिवार और दोस्तों के समर्थन का एक नेटवर्क बनाना शामिल है और ये सभी प्रभावी शिक्षा से संभव होता है।

सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा की भूमिका : सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में शिक्षा के कार्य निम्नलिखित हैं:

1) परिवर्तन के विरोध को दूर करना: समाज में कुछ लोग, वर्ग या तत्त्व ऐसे भी होते हैं, जो सामाजिक परिवर्तनों का विरोध करते हैं। कुछ ऐसे परम्परावादी होते हैं, जिनका काम ही विरोध करना होता है। शिक्षा ऐसे विरोधी लोगों में परिवर्तन के महत्त्व को समझाती है। वह अन्धविश्वास समाप्त करके विरोधियों को भी सहयोगी व साथी बनाती है।

2) सामाजिक परिवर्तन की समीक्षा (विश्लेषण) करना: परिवर्तनों के गुण-दोषों को देखने के बाद ही पता चलता है कि परिवर्तन उचित है या नहीं। यह विश्लेषण एवं समीक्षा शिक्षा ही कर सकती है।

3) सामाजिक परिवर्तनों को अपनाने में लोगों को तैयार करना: शिक्षा का यह एक महान कार्य है कि वह सामाजिक परिवर्तनों को अपनाने के लिए जनता को तैयार करे। जब शिक्षित लोग परिवर्तनों को अपनायेंगे तो समाज के अन्य लोग भी उन्हें आसानी से स्वीकार कर लेंगे।

4) सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में शिक्षा : शिक्षा एक साामजिक प्रक्रिया है। इसलिए शिक्षा का कार्य समाज में कुरीतियाँ दूर करना भी है। भारत जैसे देश में जहाँ अनेक गन्दी परम्परायें एवं कुरीतियाँ हैं, वहाँ शिक्षा को उनमें परिवर्तन करना चाहिए, जैसे दहेज प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह आदि क्षेत्रों में।

5) नये परिवर्तनों का मूल: शिक्षा के कारण खोज एवं आविष्कारों को बल मिलता है। आविष्कार समाज में परिवर्तन लाते हैं। इन दोनों के बीच का सम्बन्ध क्रिया-प्रतिक्रिया जैसा है। शिक्षा ही परिवर्तनों का मूल है। वही समाज में नये सुधारों के लिए रास्ता खोजती है।

6) सामाजिक परिवर्तनों में नेतृत्व करना: शिक्षित व्यक्तियों ने सदा से सामाजिक परिवर्तनों का नेतृत्व किया है, जैसे- राजा राममोहन राय, महात्मा गांधी, स्वामी दयानन्द आदि। शिक्षा ही जनतांत्रिक व्यवस्था के लिए नेतृत्व पैदा करती है।

7) ज्ञान के क्षेत्र में विकासः शिक्षा का कार्य है, ज्ञान प्रदान करना। ज्ञान से ही खोज एवं आविष्कार होते हैं। खोज एवं आविष्कार से ही समाज आगे बढ़ता है।

8) सामाजिक अनुकूलन में सहयोगः दुर्खीम के मतानुसार, शिक्षा बच्चों को भाषा, धर्म, नैतिकता तथा सामाजिक प्रथाओं के माध्यम से सामान्य सामाजिक परम्परा का प्रसारण कर, सम्पूर्ण समाज में जीवन व्यतीत करने योग्य बनाती है।

9) राष्ट्रीय एकता एवं आर्थिक वृद्धि : शिक्षा ही आर्थिक विकास का मार्ग बनाती है। वह सामाजिक कुशलता एवं आर्थिक कुशलता की भावना का विकास करती है। इससे समाज के परिवर्तन में योगदान मिलता है।

निष्कर्ष : भारत में सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा हमेशा से सबसे अधिक और प्रभावशाली उपकरण रही है और अभी भी है। शिक्षा मानसिकता बदलकर विकास लाती है। लेकिन आधुनिक जटिल राष्ट्रीय समाजों में, शिक्षा को सांस्कृतिक विरासत को नियंत्रित करने और संरक्षित करने के लिए एक बल के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। भारत जैसे विविध समाज में अधिक व्यापक शक्ति रखने वाली ताकतों के साथ सद्भाव में रचनात्मक सामाजिक परिवर्तन लाने में इसे केवल एक सहकारी अभिकरण के रूप में माना जाना चाहिए। भारतीय शिक्षा प्रणाली को उचित कानूनों और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के माध्यम से पूर्ण आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। देश की क्षेत्रीय, भाषाई और सांस्कृतिक विविधताओं को ध्यान में रखते हुए कानून बनाए जाने चाहिए। शिक्षा अवसर और अनुभव प्रदान करके समाज को बदल सकती है जिसके माध्यम से व्यक्ति उभरती जरूरतों और बदलते समाज के दर्शन के साथ समायोजन के लिए खुद को विकसित कर सकता है। एक अच्छी सामाजिक प्रगति के लिए जीवन के हर पहलू-सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक में सावधानीपूर्वक योजना की आवश्यकता होती है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि सामाजिक परिवर्तन में शिक्षाविदों, शिक्षकों और स्कूलों की जबरदस्त जिम्मेदारी है। दोषपूर्ण शिक्षा से दोषपूर्ण सामाजिक परिवर्तन होते हैं। इसलिए यदि समाज को सही दिशा में बदलना है, तो यह आवश्यक है कि शिक्षा प्रणाली पर ध्यान दिया जाए, क्योंकि शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का निर्माता है।

संदर्भ :

(n.d.). Retrieved october 2023, from A research guide: https://www.aresearchguide.com/education-facilitate-social-change.html

(n.d.). Retrieved from owlgen.in: https://www.owlgen.in/describe-the-role-of-education-as-an-agent-of-social-change/

(2018). Retrieved from Researchgate.in: https://www.researchgate.net/publication/325143953_Education_as_an_instrument_of social_change_and_enhancing_teaching-learning_ process_with_thehelp_of technological_development

Agrawal, A. (2014). Education in India: Challenges and its role in bringing social change. International Journal of Interdisciplinary and multidisciplinary studies(IJIMS), 58-61.

Bhasha, C. P. (2017). Role of education in social change. International Journal of Advanced Educational Research, 2(5), 236-240.

Mishra. (2014). Education as an agent of social change. International Research Journal of Management Sociology & Humanity (IRJMSH), 5(8), 8-12.

Patil, N. (2012). Role Of Education In Social Change. International Educational E-Journal, I(II), 205-210.

Rao, K. (2018, April). A study on the Role of Education in Social change. Journal of Advances and Scholarly researches in Allied Education, 15(1), 1207-1213.

Sharma, R. (2016). Creating Social Change: The Ultimate Goal of Education. International Journal of Social Science and Humanity, 6(1), 72-76. Retrieved from http://www.ijssh.org/vol6/621-CH381.pdf

Sulaiman, M. M. (2021). Education and Social change. International Journal of Applied Research, 7(2), 85-88.

असिस्टन्ट प्रोफेसर
एम.बी.पटेल कॉलेज ऑफ एज्युकेशन,
सरदार पटेल युनिवर्सिटी,वल्लभ विद्यानगर,
जिला-आणंद, गुजरात -388120
ईमेल : chaudharibrijesh4@gmail.com

समकालीन हिंदी दलित कहानियों में नारी जीवन

डॉ. आर्या.वी.एस

भारतीय समाज ने स्त्री को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। नारी अपने जीवन में बेटी, बहन, माँ, पत्नी एवं सहेली की भूमिका को बखूबी निभाती है। स्त्री ही एक साथ एक ही समय में इतने सारे काम खूबसूरती से कर सकती है। लेकिन पुराने ज़माने में स्त्रियाँ घर के अंदर ही कैद रहती थीं। उसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता या इच्छाओं की पूर्ति की कोई स्वतंत्रता नहीं थी। वह हमेशा पुरुषों की दासी थी। घर से बाहर आने की इच्छा होने पर भी कई स्त्रियाँ आज भी छुपी रहती हैं। स्त्रियों पर कई तरह के अत्याचार हो रहे हैं। घर, ऑफिस, कॉलेज आदि जगहों में नाना प्रकार की पीड़ाओं को सहना पड़ता है। समाज में वह असुरक्षित है।

भारतीय वर्ण व्यवस्था ने दलितों को जिस दुर्घट स्थिति में डाला है, उससे बहुत बुरी हालत दलित स्त्रियों की है। उसे सिर्फ भोग वस्तु मानी जाती है। मर्द अपने इच्छानुसार नारी का उपयोग करते हैं और इच्छा पूर्ति के बाद उसे बाहर फेंकने से हिचकते नहीं। दलित नारियों को मुख्य रूप से दो तरह के शोषण का शिकार बननी पड़ती है। एक तो स्त्री होने का सहज शोषण, दूसरा दलित होने के कारण को लेकर शोषण होता है। समकालीन साहित्य में दलित स्त्री की समस्याओं का चित्रण भी देख सकते हैं। "दलित समाज में नारी पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलती है, अतः हम कह सकते हैं कि दलित समाज में स्त्री को समानता का अधिकार प्राप्त है।वह भी खेत में अपने पति के साथ काम करती है, सड़क पर रेड़ी डालती है, भवन निर्माण में मजदूरी करती है या इसी तरह अनेक काम झाड़ू लगाने से लेकर मैला उठाने तक के वह करती है। कई बार तो यह भी देखने में आया है कि घर और पुरुष दोनों को सँभालती है।"[1]

पारिवारिक जीवन : समाज का निर्माण परिवार से होता है। व्यक्तियों से परिवार बनते हैं। साहित्य में पारिवारिक चित्रण महत्वपूर्ण ढंग से हो रहा है। समाज में व्याप्त वर्ण भेद दलितों के पारिवारिक जीवन में भी दृष्टिगोचर है। दलित नारियों का जीवन कठिनाइयों से होकर गुज़रते हैं। समाज ने स्त्री को आदर्शोन्मुख स्थान प्रदान किया है। आदर्श पत्नी, आदर्श माँ, आदर्श बेटी, आदर्श बहू, आदर्श बहन आदि। दलित नारी को पहले से आज तक विविध रूप की कष्टताओं को सहना पड़ा है। दलित साहित्य में नारी को एक अलग प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है।

सूरजपाल चौहान कृत 'बदबू' कहानी में सन्तोष पारिवारिक पीड़ा की शिकार है। संतोष कस्बे के हाईस्कूल पास करनेवाली पहली लड़की है। सन्तोष को परिवारवाले आगे की पढ़ाई के लिए भेजने के अलावा उसकी शादी करवाते हैं। सन्तोष को आगे पढ़ने की इच्छा थी। उसकी मर्जी के बिना शादी होती है। "शादी से पहले ससुराल की जो तस्वीर उसने सँजोकर रखी थी, वह पल-भर में धूल-धुसरित हो गयी। पति रजिन्दर एम.सी.डी में सफाई कर्मचारी का काम तो करता ही था।, उसकी सास शकरपुर व लक्ष्मीनगर के इलाके में मोहल्ले कमाने का काम करती थी और छोटी ननद डी. डी. ए मयूर विहार के क्वाटरी में सारे दिन झाड़ू-पोंछा करती - फिरती।"[2] उसने कभी नहीं सोचा कि उसे भी सास के साथ मल-मूत्र उठाने के लिए जाना पड़ेगा। वह अवाक् हो जाती है। वह अच्छी पढ़ी-लिखी स्वाभिमानी नारी है। इसलिए वह ऐसे कामों का विरोध करती है।

नारी शिक्षा: भारत पुरुष सत्ता प्रधान देश माना जाता है। नारी का मान सम्मान होने के बावजूद भी समाज में स्त्री पीछे हो रही है। इसमें स्त्री शिक्षा की बात तक नहीं थी। महानों के कठिन प्रयत्न के कारण ही दलितों की शिक्षा का प्रारंभ हुआ है। अशिक्षा के कारण दलित नारी घर के अंदर ही कैद हो गयी। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर और ज्योतिबा फुले के कठिन परिश्रम से दलित नारियों की शिक्षा का प्रचार प्रसार हुआ। ज्योतिबा फुले ने अपनी पत्नी सावित्री बाई फुले को प्राथमिक शिक्षा प्रदान की। उसने दलित लड़कियों के लिए स्कूल खोला। सावित्री बाई फुले दलित समाज की प्रथम शिक्षिका थीं। "दलित समाज में शिक्षा के प्रति जागरूकता नहीं थी। हजारों वर्षों से वंचित समाज शिक्षा के अभाव में था। क्योंकि सारे दलित समाज को ही व्यवस्था ने शिक्षा से वंचित रखा था, और पुश्तैनी धन्धा

करने के कारण दलित नारियों की स्थिति बद से बदतर थी, उसे बहुत यातनाएँ झेलनी पड़ी थीं इसलिए दलित समाज को मुक्ति दिलाने के लिए बाबा साहेब ने एक मंत्र दिया- 'शिक्षित बनो, संगठित बनो, संघर्ष करो।' इस संदेश में ही दलितों की मुक्तिहै ऐसा वे मानते थे।"[3]

दलित समाज में स्त्री शिक्षा को उतना महत्व नहीं दिया जा रहा है। समकालीन कहानीकार नारी शिक्षा पर जागरूक हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में नारी शिक्षा को चित्रित किया है। इस तरह की एक नारी का चित्रण सूरजपाल चौहान ने 'बदबू' कहानी में किया है। सन्तोष को पढ़ने की बहुत इच्छा थी। फिर भी सन्तोष को हाईस्कूल तक भेजा जाता है। "सन्तोष अपने कस्बे के किसी भी दलित परिवार की पहले ही लड़की थी जिसने हाईस्कूल की परीक्षा पास की थी।"[4] सन्तोष के पिता उसे आगे पढ़ने के लिए भेजना नहीं चाहते हैं। वे लोग अपनी ज़िद्द पर अटके रहे। इसका एक और कारण भी है। गाँव में आगे की पढ़ाई के लिए कोई व्यवस्था न थी। गाँव के स्कूल में सिर्फ हाईस्कूल की कक्षा तक पढ़ाई है। आगे पढ़ने के लिए शहर जाना पड़ता है। शहर आने जाने के लिए गाड़ी की व्यवस्था भी ठीक से नहीं है। हॉस्टल में रहना पड़ेगा। विवाह योग्य लड़की को शहर भेजना योग्य नहीं माना जाता था। सन्तोष के पिता अनपढ़ थे। इसलिए वह शिक्षा की आवश्यकता पर अज्ञानी हैं।

आज शिक्षा सबके लिए अवश्य बन गयी है। दलित नारियों को अपना न्याय पाने के लिए शिक्षित होना जरूरी हो गया। शिक्षा से अपने उपर होने वाले अत्याचारों से वह मुक्त हो जाएगी। दलितपन से उनकी मुक्तिहोगी। 'सा विद्या या विमुक्तये' वाक्य यहाँ उचित है। अच्छी विद्या से मुक्ति मिलती है। दलित नारियों को अपने समाज से, सवर्णों से मुक्ति सिर्फ शिक्षा प्राप्त कर अपना अस्तित्व स्थापित करने से ही मिलेगी।

नारियों का अपमान : स्त्री मानव जीवन का हिस्सा है। स्त्री के बिना पुरुष अधूरा है। स्त्री को घर और ऑफिस एक साथ चलाना है। शिक्षा के प्रचुर प्रभाव के कारण नारी आज समाज के उच्च पदों पर कार्यरत है। फिर भी कई जगहों पर उसे अपमानित किया जाता है। पुरुष जब भी मौका मिलता है, स्त्री का अपमान करने से नहीं हिचकता है। दलित स्त्रियों को इसके साथ साथ जातिगत अपमान भी सहना पड़ता है। निम्न जाति होने के कारण सवर्ण मर्द उन पर अधिकार ज़माते हैं।

ओमप्रकाश वाल्मिकी की चर्चित कहानी है 'अम्मा'। इस कहानी में भी दलित नारी का अपमान करने का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। अपनी आर्थिक समस्या के कारण अम्मा को झाड़ू, कनस्तर लेकर मोहल्ले में सफाई का काम करना पड़ा। एक दिन अम्मा भी सवर्ण मर्द द्वारा अपमानित हो गयी। अम्मा जब मिसिस चोपडा के घर सफाई करने जाती है तब मिसेस चोपडा के घर आने-जाने वाले विनोद अम्मा पर अत्याचार करने का प्रयत्न करता है। "विनोद ने टट् टी में पानी डालने की बजाय अम्मा की कमर में हाथ डालकर झटके से उसे अपनी ओर खींचा। अम्मा इस हरकत से हड़बड़ा गई विनोद ने दबाव बढ़ा दिया। कसकर अपने सीने से भींच लिया।"[5] अम्मा की सबसे बड़ी आमदनी उसी घर का है। उसे दस रुपया मिलता है। लेकिन विनोद ने उनपर अत्याचार करने की कोशिश की। अम्मा उस घर की सफाई छोड़ देती है। अम्मा एक आदर्श नारी है।

'अपना गाँव' कहानी स्त्री अपमान पर लिखी गयी है। मोहनदास नैमिशराय ने 'अपना गाँव' कहानी में सवर्ण द्वारा पूरे समाज के सामने शारीरिक एवं मानसिक रूप से अपमानित छमिया की चित्रण किया है। छमिया का पति संपत ठाकुर से पाँच सौ रुपए कर्ज लेकर नौकरी की तलाश में शहर गया। एक दिन ठाकुर की हवेली से हुकुम आया कि पाँच सौ रुपए के ब्याज के बदले छमिया को ठाकुर के खेत में काम करने के लिए जाना है। उसने मना कर दिया। एक दिन लकड़ी लेकर आते वक्तठाकुर के मंझले बेटे और चार कारिन्दों ने रास्ते पर उसे रोक दिया। उसको पूरी तरह नंगा कर दिया। वह ज़ोर से चिल्लाई। पूरे गाँव में सबके सामने उसे नंगे हालत में घुमाया। शाम तक छमिया को इसी हालत पर चलना पड़ा। किसी को भी पता नहीं था कि छमिया की गलती क्या है? छमिया खुद नहीं जानती कि उसने क्या पाप कर लिया है कि इतनी क्रूर सज़ा किसके लिए है। एक स्त्री को इससे बुरी हालत का सामना कभी नहीं करना पड़ेगा। जिस संस्कृति में नारी की पूजा होती है, आशीर्वाद लेते हैं, दूसरी तरफ छमिया को अपमान करते

हैं। उसे स्त्री के रूप में नहीं केवल दलित के रूप में देखते हैं।

मोहनदास नैमिशराय ने 'उसके जख्म' कहानी में स्त्री अपमान की समस्या को चित्रित किया है। यहाँ वकील द्वारा निर्दोषी नारी को अपराधी बनाते हैं। मी. लॉर्ड, जिरह करने वाला वकील व्यावसायिक स्वर में बोल उठता है "नोट किया जाए, रात के दस बजे जब गाँव में सभी सो जाते हैं तब कमला रोटी देने अकेले खेत पर जाती है। सच तो यह है कि जब हीरा सो गया तो कमला को बाहर निकलकर इश्क लडाने का मौका मिल गया। ऐसा वह पहले भी......।"[6] कानून व्यवस्था लोगों की भलाई के लिए बनायी गई है। आज़ादी के बाद भारतीयों में एकता लाने के लिए कानून व्यवस्था की स्थापना की गयी है। कानून के सामने सब बराबर हैं। पैसों के लिए वकील लोग सच्चाई को बेचकर झूठ को पकड़ते हैं। कमला के जीवन में भी ऐसा ही हुआ था। रात खेत में काम करने वाले पिता को खाना खिलाने जाने वाली कमला पर जमींदार ने बलात्कार किया। कमला ने अदालत में शिकायत की। ज़मींदार के वकील अदालत में कमला का अपमान करता है। कमला को दोषी बनाने की पूरी कोशिश करती है। दलित अपनी जन्म जात हार अपनाकर निशब्द रहती है।

नारियों पर शारीरिक उत्पीड़नः भारत में पुरुषों को ही ज्यादा मान्यता दी जाती है। नारियाँ रसोई से बाहर मंच पर आयीं। उन्होंने अपने खुद की एक जगह बनाने का प्रयत्न किया। पुरुषों के बराबर समानता लड़कर हासिल की गयी थी। नारियों पर बलात्कार की समस्या बढ़ रही है। दलित नारियों पर बलात्कार की समस्या आम बात हो गयी है। आज बलात्कार की खबरें लगातार अखबारों में आती रहती हैं। स्त्री को भोग्य मानने वाले मर्द स्त्री पर बलात्कार करते रहते हैं। सवर्ण दलित नारियों पर भी ऐसा अत्याचार कर रहे हैं। नारियों की इस भीषण समस्या का चित्रण दलित साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं द्वारा किया है। दलितों की ज्यादातर कहानियों में नारी बलात्कार का चित्रण देख सकते हैं। "दलित स्त्री दैनंदिन जीवन में अनेक प्रकार के दमन की शिकार होती है, लड़की के रूप में पैदा होने के कारण घर में, अस्पृश्य जाति में पैदा होने के कारण गली में, सवर्णों के खेतों में काम करनेवाली महिलाओं दलितों की बहू - बेटियों के साथ छेड़खानी करना और उनकी इज्जत लूटना जैसी घटनाओं का शिकार निरंतर होना पड़ा है। गाँव के सवर्ण लोग दलित महिलाओं को निरंतर अपने हवस का शिकार बनाते रहे हैं।"[7]

'जंगल की रानी'ओमप्रकाश वाल्मीकि की चर्चित कहानी है। कहानी की नायिका कमली एक आदिवासी इलाके के स्कूल की शिक्षिका है। वह पढ़ने में होशियार थी। ग्रामीण महिला प्रशिक्षण शिविर में भागीदारी लेने के लिए वह शहर आयी। एक बार डिप्टी साहब स्कूल के कुछ कार्यक्रम में पहुँचा। वहाँ कमली से मुलाकात हुई। उसी दिन से कमली डिप्टी साहब के दिलो-दिमाग पर छाई हुई थी। इसलिए प्रशिक्षण शिविर में उसने कमली को भी बुलाया। वह कमली को पाने के लिए लालायित था। "कमली को बुरी तरह बाँधकर, मुँह में कपड़ा ठूँसकर लाया गया था। कमरे में लाकर उसे खोल दिया गया था। कमरे में डिप्टी साहब और एस. पी को देखकर कमली सब कुछ समझ गई थी। उसके अन्तस में अपमान की भट्ठी सुलग उठी थी। कमली को देखते ही डिप्टी साहब बेकाबू हो गए थे। भूखे तेन्दुए की तरह वे कमली पर झपट्ट पड़ी।"[8] डिप्टी साहब अकेला नहीं था। उनके साथ एस. पी और विधायक जी भी उपस्थित थे। तीनों मर्दों के सामने एक नारी कब तक लड सकेगी? उनकी हत्या हुई।

मोहनदास नैमिशराय की कहानी 'कज' में अशोक की माँ-बहन के साथ भी बलात्कार होती है। पिता की अचानक मृत्यु के बाद, पिता द्वारा लिए गये कर्ज को निभाने का दायित्व अशोक के ऊपर आता है। अशोक महाजन की इच्छा के विरुद्ध अपने काम स्थान पर वापस जाता है। महाजन की गिद्ध दृष्टि अशोक की माँ रामप्यारी और बहन कमला पर पड़ती है। उन लोगों ने कभी नहीं सोचा होगा कि कर्ज के बदले अपनी इज्जत और ज़िन्दगी खोनी पड़ेगी। कमला और रामप्यारी को रात के अंधेरे में बेइज्जत कर दिया। दिन के उजाले में जो स्त्री निकृष्ट, निम्न, अस्पृश्य है, रात की कालिमा में उसी स्त्री के शरीर का सुख लेने के लिए षडयंत्र रचाते हैं।

दलित नारी का प्रतिरोध : दलित नारियों को विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है। वे हमेशा पुरुषों की गुलाम रही हैं। दलित लोगों ने अपनी रचनाओं में दलित नारी का

प्रतिरोधी भाव को भी दर्शाया है। कई कहानियों में दलित नारियों ने अपने ऊपर हो रही हिंसा के खिलाफ़ प्रतिशोध करना शुरू कर दिया है। हालांकि शिक्षा और नियमों के ज्ञान ने उसे थोड़ी हिम्मत दी, फिर भी दलित नारियों का जीवन आज भी साहसिक है, समस्याओं से भरा है। दलित नारियों के प्रतिरोध का चित्रण विविध कहानियों में इस प्रकार किया गया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'यह अंत नहीं' में बिरमा अपने ऊपर सचिन्दर द्वारा किये बलात्कार के विरुद्ध प्रतिरोध करती है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'चिड़ीमार' में सुनीति को प्रतिरोधी नारी के रूप में दर्शाया गया है। सुनीति के दफ़्तर आते-जाते रास्ते में, हर रोज़ तीन युवक मिलकर उसे पर तंग करते हैं। हर बार वह चुप-चाप, सिर झुकाकर चली जाती है। क्षमा का भी एक हद होता है। बहुत दिन चुप रहने के बाद ही सुनीति प्रतिरोध करने के लिए विवश हो गयी।

'अंगूरी' कहानी की नायिका अंगूरी को प्रतिरोध नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अंगूरी अपने उपर होनेवाले अत्याचार के विरुद्ध लड़ती है। अंगूरी बहुत बहादुर, शक्तिशाली एवं हिम्मत वाली औरत है। चन्द्रभान के बलात्कार की कोशिश अपनी पूरी ताकत से रोकती है। अंगूरी की वार पर चंद्रभान और काले पहलवान डरकर भाग गये। शेरनी से लडने के लिए सब डरते हैं।

जयप्रकाश कर्दम की कहानी साँग में चम्पा प्रतिरोधी नारी का प्रतीक है। जयप्रकाश कर्दम ने कमला के माध्यम से एक असहाय नारी के प्रतिरोध को चित्रित किया है। चम्पा अपने पति की हत्या का बदला लेती है। मुखिया के कारण नष्ट हो गये परिवार, पति, बच्ची आदि का बदला लेती है।

निष्कर्ष : दलित साहित्यकारों ने दलित जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को साहित्य में प्रस्तुत किया है। नारी इसमें पीड़ित है। दलित नारी को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। मुख्य रूप से सवर्णों द्वारा शारीरिक शोषण की समस्याएँ ही हैं। नारी सदैव पीड़ित है। कई कहानियों में बलात्कार के बीच में उसी लड़की की हत्या होने का चित्रण भी देख सकते हैं। ये सब पढ़ते वक्त पाठक अवाक् होता है कि आज इतनी सुव्यवस्थित कानून व्यवस्था होने के बावजूद भी ये सब हमारे समाज में कैसे हो रहा है? सवर्ण पैसे से कानून को भी खरीद कर रखा है। सवर्णों के विरुद्ध मामला दर्जा करने के लिए भी पुलिस अधिकारी तैयार नहीं हैं। स्त्री शिक्षा के प्रभाव के कारण दलित नारियाँ प्रतिरोध करने का प्रयत्न करती हैं। कुछ स्त्रियाँ अपनी परिस्थिति के कारण भी अपने ऊपर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने की ताकत दिखाती हैं। अगर ऐसा नहीं करती हैं तो आने वाले समय में भी ये नारियाँ सवर्णों के शिकार होती जाएँगी। दलित नारियों पर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने में उनके परिवार वाले डरते हैं। क्योंकि वे जानते थे कि उसका फल क्या होगा। लेकिन आज की युवा पीढ़ी इस सोच से बाहर आ गयी है। यह अंत नहीं कहानी में किसना, 'कर्ज' कहानी में अशोक आदि पात्रों ने अपने घर की स्त्रियों पर होनेवाले अत्याचार के विरु द्ध आवाज़ उठाने की ताकत दिखायी है। चंपा, अंगूरी, बिरमा, छमिया, कमला आदि नारी पात्रों अपने ऊपर हुए अत्याचार के विरुद्ध बदला लेने के लिए, अपना न्याय के लिए खड़ी रहती हैं। पुलिस तक जाने के लिए वे डरते नहीं हैं। लेकिन सामाजिक परिस्थितियों ने उन अबलाओं को नीति-न्याय नहीं प्रदान किया। आज इस स्थिति में ज्यादा बदलाव आ चुका है। दलित नारियाँ समाज के उच्च पदों पर कार्यत हैं। आने वाले समय में भी जो दलित नारियाँ घर के अंदर कैद रही हैं, वे भी बाहर आएँगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. दलित साहित्य के प्रतिमान - डॉ. एन. सिंह - 240
2. नया ब्राह्मण - सूरजपाल चौहान - 17
3. सुरजपाल चौहान की कहानियाँ - नारायण राठौड़ - 80 में दलित जीवन
4. नया ब्राह्मण - सूरजपाल चौहान -15
5. सलाम - ओमप्रकाश वाल्मीकि - 116
6. आवाज़ें - मोहनदास नैमिशराय - 125
7. दलित अवधारणा एवं ओमप्रकाश - वैजनाथ महालिंगे -219 वाल्मीकि का साहित्य
8. घुसपैठिये - ओमप्रकाश वाल्मीकि - 99-100

पी डी एफ, हिन्दी विभाग
केरल विश्वविद्यालय, कार्यवट्टम
ईमेलः aryarajeshr19@gmail.com

हिंदी कहानियों में दिव्यांग विमर्श

डॉ.रम्या जी एस नायर

हिंदी साहित्य में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श के बाद अब वृद्ध विमर्श की भी धमाका सुनाई देने लगी है। इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक की दस्तक के रूप में दिव्यांग विमर्श स्थापित हो रहा है। जाति और लिंग से रहित शुद्ध मानवतावादी दृष्टि पर आधारित यहाँ ऐसा अभिनव विमर्श है जो किसी मानव को जन्म से या जीवन पर्यन्त किसी दुर्घटना या विकार से कभी भी हो सकता है। इसके लिए समाज में जागृति लाना और इनके समग्र विकास हेतु जनता, शासन और समाजसेवी संस्थाओं में सामंजस्य का सूत्रपात करना आज के समय की मांग है। हमारे देश में ही नहीं, पूरे विश्व में विकलांगों की संख्या पंद्रह प्रतिशत है लेकिन विडम्बना ही कही जाएगी कि उनके पुनर्वास की समस्या आज भी मुंहबाये खड़ी है। दिव्यांगता ऐसे ही शारीरिक एवं मानसिक अक्षमता है जिसके चलते कोई व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तरह किसी कार्य को करने में अक्षम होता है। तत्कालीन दृष्टि से दिव्यांग एवं दिव्यांगता व्यापक संदर्भ वाले शब्द हैं, जिनकी एक से अधिक परिवर्तनशील परिभाषाऐं हैं। भारतीय समाज-इतिहास को देखने से स्पष्ट होता है कि दिव्यांगों की अपनी कोई पहचान नहीं रही है। निरंतर तथा योग्य कार्य करते रहे, समाज में स्थित स्थापित वर्ग की सेवा करते रहे और बदले में वे जितना देते है उतने में संतुष्ट रहते हैं।

एक दशक से स्त्री, दलित, आदिवासी व जनजातीय- विमर्श की परिक्रमा व पड़ताल करने के पश्चात् युग की माँग के अनुरूप अब दिव्यांग विमर्श का भी वृत्त विनिर्मित करना समकालीन समीक्षा का सोपान सिद्ध होगा। भरत में पहली बार सन् 2001 में दिव्यांगों की जनगणना की दिशा में कार्य आरम्भ हुआ। ऐसे में दिव्यांग विमर्श साहित्य के मध्य में समाज की धारणीय विकास की एक पहल है। दिव्यांग विमर्श के द्वारा समाज में सकारात्मक योगदान देने वाले दिव्यांगों के जीवन के प्रेरक प्रसंगों द्वारा अन्य दिव्यांगों की अन्तर्निहित प्रतिभा को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

दिव्यांगों के लिए दिव्यांग शब्द का प्रयोग अभी नया है। इसके पूर्व दिव्यांगों के लिए विकलांग शब्द प्रचलन में था। दिव्यांग शब्द प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा दिव्यांगों के सम्मान और उनकी विलक्षण प्रतिभा को देखते हुए स्वीकार किया गया है। माननीय प्रधानमंत्री के अनुसार दिव्यांग व्यक्ति शरीर से अक्षम होते हुए भी ऐसे विलक्षण काम कर जाते हैं कि उनकी योग्यता और प्रतिभा पर आश्चर्य होता है। ऐसे में शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों के लिए विकलांग के स्थान पर दिव्यांग शब्द प्रयोग किया जाना चाहिए। किंतु आदर्श और यथार्थ में हमेशा से विभेद रहा है। दिव्यांगजन समाज में हाशिए पर आते हैं। सदियों से ये लोग उपेक्षित जीवन जीते हैं।

समाज और साहित्य आपस में अन्तर्सम्बंधित है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। समाज की आवश्यकता को साहित्य भलीभांति समझता है तथा समाज साहित्य लेखन के लिए कच्चा माल प्रदान करता है। दिव्यांगों के संघर्ष, उनकी समस्यायें, उनके जीवन के साहसिक एवं प्रेरक प्रसंग पाठक एवं समाज के सामने प्रस्तुत किया जाय। इससे समाज का दिव्यांगों के प्रति जो नकारात्मक रवैया है, उसमें बदलाव होगा। इसके साथ ही दिव्यांग विमर्श के ज़रिए इन उपेक्षित व्यक्तियों की अन्तर्निहित प्रतिभा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे दिव्यांगों को आत्मसम्मान और स्वावलम्बन की भावना का विकास किया जा सकता है।

सामान्यतया विकलांगता यानी दिव्यांगता ऐसी शारीरिक एवं मानसिक अक्षमता है जिसके चलते कोई व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तरह किसी कार्य करने में अक्षम होता है। यह व्यक्तिके मन में निराशा उत्पन्न कराती है, हीनता की भावना भरती है। फलतः व्यक्तिअकर्मण्य एवं आलसी हो जाता है, अपने को धरती का बोझ समझता है।

वह ईश्वर एवं स्वयं को कोसता फिरता है, लेकिन यदि उसे उपयुक्त वातावरण एवं सम्यक प्रेरणा-प्रोत्साहन मिले तो वह उपलब्धियों के शिखर पर आसीन हो सकता है, ज़रूरत इस बात की होती है कि उसे दूसरे अंग को अधिक सचेष्ट, क्रियाशील एवं कार्य-कौशल संपन्न बनाया जाए। दीर्घतमा, अष्टावक्र, शुक्राचार्य, जायसी, सूरदास, राणा संगा, रणजीतसिंह, विनोद कुमार मिश्रा, रवींद्र जैन, सुधा चंद्रन, राजेंद्र यादाव, वल्लत्तोल, बाबा आम्टे, होमर,मिल्टन, स्काट, मार्सेल पाउस्ट, हेलेन केलर, थामस अल्वा एडीसन, लइब्रेल, स्टीफन हाकिंग्स, लारा ब्रिजमैन आदि की हैं, उसकी चकाचौंध से सारा संसार जगमगा है। यह इसलिए संभव हो सका कि उन्होंने अपनी भीतरी शक्ति को पहचाना और उसे सचेष्ट तथा क्रियाशील बनाया। जायसी की प्रसिद्ध उक्तिऐसी है मोहि का हँससि कि कोह रही? यानि तू मेरे ऊपर हँसा था या उस कुम्हार (ईश्वर) पर। जायसी ने अपनी दिव्यांगता को कोसने के बजाए उसे महिमा मंडित ही किया है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि दिव्यांग लोगों को सम्यक शिक्षा और रोज़गार की सही दिशा बताई जाए। इस धारणा को पुष्ट किया जाए कि दिव्यांग लोग समाज पर अनावश्यक बोझ नहीं बल्कि समाज का एक कमज़ोर हिस्सा है, जिसे मज़बूत और सशक्तबनाना बहुत ज़रूरी है। दिव्यांग लोगों को नव जीवन देने एवं समाज की मुख्यधारा में शामिल कर उन्हें प्रगतिगामी बनाने में विकलांग-विमर्श या दिव्यांग की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि भारत में दिव्यांग विमर्श की एक सुदीर्घ परंपरा रही है।

साहित्य में ऐसे दिव्यांग पात्रों का वर्णन हुआ है जैसे -श्रवण कुमार के माता-पिता, एकलव्य, कंस की दासी कुब्जा, पृथ्वीराज चौहान, राणा संगा, कौरवों के पिता महाराज धृतराष्ट्र तथा कैकेई की दासी मंथरा आदि। इसके विकल अंगों की शक्तिअन्य अंगों को अतिरिक्तक्षमता देती है।

हिंदी साहित्य में अनेक कहानियों, नाटकों तथा उपन्यासों में दिव्यांग पात्रों की पीड़ा को व्यक्तकिया गया है। कथा-संम्राट प्रेमचंद की पत्नी से पति कहानी में दिव्यांग पात्र अंकित भीख मंगाकर देश-प्रेम के लिए पैसा दान करके राष्ट्र-भक्ति का परिचय देता है। जो कार्य सकलांग नहीं करते, एक दिव्यांग उसे करके प्रेरक उदहारण प्रस्तुत करता है।

जयशंकर प्रसाद की 'बेड़ी' कहानी एक नेत्रहीन नायक की कहानी है जो एक नौ-दस साल की अवस्था के पुत्र को लाठी के रूप में उपयोग करके और भीख माँगकर गुज़र-बसर करता है। इसमें अंधे को सूरदास का सम्बोधन देकर दिव्यांग के प्रति सम्मान की भावना व्यक्तकी गई है। प्रस्तुत कहानी दिव्यांग मनोविज्ञान पर आधारित है। एक बार बालक अंधे पिता को छोड़कर नौकरी की तलाश में कहीं भाग गया। बालक विलग होकर पिता सूरदास ने कुछ दिनों में ही असहाय- निरुपाय होनर का दंश झेल लिया था और जानता था की बल-पराक्रम के आधार पर पुत्र पर नियंत्रण असंभव है इसलिए उसने चंचल बालक पर अंकुश लगाने के लिए मन मसोस कर पैरों में बेड़ी पहनाने का निश्चय किया। इसी निश्चय से उसे अपने एकमात्र सहारे को खो देना पड़ा। ममता कालिया की 'राजू' कहानी में काना राजू यदि 'अपशगुनिया' है तो उसकी विधवा माँ भी अमंगलकारी है। कहानी का संवेद्य पक्ष यह है कि राजू की मौसी के यहाँ के विवाहोत्सव में माँ-बेटे को काल-कोठरी में कैद करके सारे रस्म-रिवाज़ संपन्न कराये जाते हैं।

ममता जी की और एक कहानी 'आज़ादी' में एक बुजुर्ग महिला है जो एक पैर से अपाहिज है और दूसरे में हमेशा दर्द रहता है। उसका परिवार उसकी तरफ ध्यान देता नहीं है। अधिक खर्ज की वजह से डॉक्टर के पास भी नहीं ले जाती है। एक दिन स्वतंत्रता दिवस पर अपनी पोती से कहती है कि स्कूल से आते वक्तउसके लिए थोड़ी आज़ादी पूड़ियाँ में बांधकर लाना। पोती जब स्कूल से मिली बताशे दादी के लिए बांधकर लायी तब दादी हमेशा के लिए सो चुकी थी, उसे आज़ादी मिल चुकी।

दिव्या माथुर की 'आशियाना' कहानी पेंडिगटन-लंदन में हुई बॉम्बिंग में नर्स आशा की गर्दन चूर-चूर हो जाने

से मांस की लोथड़ी बनाकर कोमा से चार महीने बड़ा गहन सघन उपचार के लिए उपस्थित है। उसकी इस नारकीय स्थिति और लगभग न बच पाने की संभावना से बच जाने के लिए पति डॉ. केशव, बेटी रैना और बेटा प्रभात लाइफ सपोर्ट सिस्टम बंद कराने के पक्षधर हैं जबकि बड़ी बिटिया लोरी और सहकर्मी सहेली नर्स जूडी इसके विरोध में है। गर्दन के नीचे पूर्ण पक्षाघात के कारण शरीर के घावों और खून के थक्कों से बचने केलिए नर्स एडवर्ड मालिश करते हुए उसे कुछ बोलने के लिए उकसाते हैं। आशा आशियाने में जाना चाहती है लेकिन उसकी स्थिति देखकर अस्पताल का रास्ता निर्दिष्ट किया जाता है और अंततः आशा अपने आशियाने में आकर ही विराम पाती है।

तेजेन्द्र शर्मा की 'मुझे मार डाल बेटा' कहानी एक ऐसे संघर्षशील पिताजी की विजय यात्रा है जो पहले अपने ही देश में विस्थापन से दंशित शरणार्थी बने और फिर लंदन में जाकर 'चार्टेड एकाउंटेंट' के रूप में पर्याप्त ख्याति अर्जित की। सेवा-निवृत्त होने के कुछ दिनों पहले ही उन्हें पक्षाघात हुआ कि व्हील-चेयर से चिपक कर रह गए और प्रत्येक दैनंदिन कार्य हेतु परवश हो गए। उनका आत्मबल आहत हुआ, लिखने-पढ़ने का हौसला पस्त हुआ, वे निर्निमेष नज़रें टिकाए और अस्फुट स्वरों में मुझे मार डाल बेटा कहकर व्यथाभिव्यक्तिकरते हैं। हर पल, हर क्षण जीवन की विजयोल्लास का पताका थमने वाला ज़िंदादिल इंसान पक्षाघात से किस तरह मुर्दादिल बन जाता है, यह देख-सुन कर एकाएक किसी की विश्वास ही नहीं होता। वास्तव में यहाँ शारीरिक से ज़्यादा मानसिक पीड़ा ही हैं जो सक्रिय व्यक्ति को निष्क्रिय -निष्पंद कर देती है।

इसके आलावा सूर्यबाला की कहानी 'फरिश्ते' में धनपति कुन्नू बाबू गरीब मटरु आ से चोरी करता है और एक दिन उसी की गलती से मटरु आ अपाहिज होकर अस्पताल पहुँच जाता है। उसके प्रति किसी को भी सहानुभूति नहीं। सभी उसकी उपहास उड़ाते हैं लेकिन केवल माँ उसमें सम्मिलित नहीं होती।

इसी प्रकार रांगेय राघव की 'गूंगा', उषाराजे सक्सेना की 'रिप्यूज कलेक्टर', माधव नागदा की 'केस नंबर पाँच सौ सोलह', प्रमिला वर्मा की 'प्रतिबिम्ब', रमेश खत्री की 'हाँ मैं तलाक ले रही हूँ', इला प्रसाद की 'आवाज़ों की दुनिया', डॉ लता अग्रवाल की 'मन के हारे हार' लवलेश दत्त की 'सजा', रेनू यादव की 'दबे पांव', गरिमा संजय दुबे की 'मरहम' आदि कहानियों में दिव्यांगता को केंद्र में रखकर उनके जीवन का संघर्ष तथा जिजीविषा के साथ उनकी मानसिक, शारीरिक विषमताओं का भी सूक्ष्म एवं मार्मिक चित्रण देखने को मिलता है।

आज दिव्यांग-विमर्श समय की मांग है। कुछ समय पहले तक हिंदी साहित्य में दिव्यांग-विमर्श जैसा कोई विमर्श भले ही नहीं था, किंतु रचनाकारों ने दिव्यांग लोगों के प्रति दया, सहानुभूति, स्नेह, सद्भाव दिखने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। दिव्यांगों की विवशता, असमर्थता, समाज में उनकी अवस्था का उल्लेख कर सुधार की आकांक्षा प्रकट की है। अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि दिव्यांग विमर्श साहित्य की आवश्यकता है। सरकार सुविधायें प्रदान कर रही है, नियम कानून बना रही है, किंतु समाज का धारणीय विकास साहित्य ही कर सकता है। हमारे समाज का एक हिस्सा दिव्यांगता का दंश झेल रहा है। इस विशेष वर्ग को हाशिये पर छोड़कर समाज का सर्वांगीण विकास असंभव सा है। अतः अब समय आ गया है कि सदियों से वंचित दिव्यांग समाज पर लेखनी चलाई जय। दिव्यांगों के संघर्ष, उनकी समस्याऐं, उनके जीवन के साहसिक एवं प्रेरक प्रसंग पाठक एवं समाज के सामने प्रस्तुत किया जाय। इससे समाज का दिव्यांगों के प्रति जो नकारात्मक रवैया है, उससे बदलाव होगा। इसके साथ ही दिव्यांग विमर्श के ज़रिए इन उपेक्षित व्यक्तियों की अंतर्निहित प्रतिभा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे दिव्यांगों को आत्मसम्मान और स्वावलम्बन की भावना का विकास किया जा सकता है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. हौसला (कहानी संग्रह) - डॉ एम फिरोज़ खान (सं)

2. कथा साहित्य में विकलांग विमर्श - डॉ विनय कुमार पाठक

सहायक आचार्य
उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा , तिरुवनन्तपुरम केंद्र

राजनीतिक परिप्रेक्ष्य का सचः नई कहानी के संदर्भ में

डॉ. सिन्धु जी नायर

मनुष्य को अन्य जीव जन्तुओं से पृथक करनेवाला तत्व है उसकी बुद्धि। एक बौद्धिक प्राणी होने के कारण सामाजिक जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिए उसे एक अनुशासन की ज़रूरत महसूस हुई। लोकतंत्र ही वह शासन प्रणाली है जो जनता की भावनाओं की कदर करते हुए समाज पर अपना अधिकार जमा रही है। मानवीय सभ्यता के विकास के अनुक्रम में राजनीति का उद्‌भव उस पायदान पर होता है जब रीति-रिवाज़ तथा परम्पराओं पर टिकी कोई भी व्यवस्था चरमराने लगती है । ऐसी स्थिति में जो लोग कल तक आदतों के सहारे जी रहे होते हैं उन्हें भविष्य के लिए कार्यों के नये मानदंड बनाने पड़ते हैं।

भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी चुनौती उसके नियंताओं का भ्रष्ट होना है । भ्रष्ट जनप्रतिनिधियों एवं अफसर वर्ग ने लोकतंत्र को कमज़ोर कर दिया है। अब जनता की हैसियत एक वोटर मात्र तक सीमित है। शासक और जनता के बीच का संघर्ष अब चरम सीमा पर पहुँच गया है । ऐसे अवसर पर साहित्यकार की भूमिका काफी महत्वपूर्ण होती है।

स्वतंत्रता के पश्चात् जनता को इस बात का एहसास हो गया कि स्वतंत्रता की परिणति उनकी कल्पना के अनुकूल नहीं हो गयी थी। जनता ने यह सपना देखा था कि देश आर्थिक दृष्टि से संपन्न हो जायेगा । राजनीतिक क्षेत्र में विश्व भर में देश की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। लेकिन यह बात मात्र स्वप्न बनकर रह गई । ज्यों ही देश में संघर्ष का युग समाप्त हुआ और देशीय सत्ता की स्थापना हुई, वह आदर्श, जिनकी कल्पना सामान्य जनता कर रही थी, टूटकर चूर-चूर हो गया। देश स्वार्थी और अवसरवादी धूर्त नेताओं के हाथ पड़ गया । वे नेता अपने स्वार्थ हेतु कुछ भी करने के लिए तैयार बैठे थे। इसके परिणामस्वरूप पुरानी मान्यताओं और मूल्यों के प्रति जनता के मन में विकर्षण या विक्षोभ पैदा हो गया।

इस दौर की कहानियों पर प्रचलित महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं, हलचलों और क्रियाकलापों का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलक पड़ा है। कहानीकार जिस वातावरण या जीवन परिवेश में जीता है, उसकी लेखनी उस राजनीतिक घटनाओं से अछूती नहीं रह पाती है। नये कहानीकारों ने अपनी कहानियों में इस सत्य से अवगत कराया है कि मनुष्य को अपनी दैनंदिन आवश्यकताओं के लिए राजनीति से जुड़ना ही पड़ता है। क्योंकि राजनीति मनुष्य की दैनंदिन आवश्यकताओं का ही एक महत्वपूर्ण अंग है। कहानीकार अपने समय को समाज के मनुष्य के द्वारा ही पकड़ने का प्रयास करते हैं। नये कहानीकारों ने कहानी को तत्कालीन यथार्थ के विविध रंगों को प्रस्तुत करने के लिए समर्थ बनाया है। इस संदर्भ में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य अत्यंत अपरिहार्य ही समझा गया है । इस दौर के कहानीकारों ने इस दर्दनाक स्थिति का भयानक चित्र प्रस्तुत किया है।

'नयी कहानी' के दौर में राजनीतिक चेतना प्रायः कम दिखाई देती है। सन् 50 के बाद अभिरुचि प्रायः कम पाई गई है। उस के बाद ही राजनीतिक चेतना की हलचल तीव्र से तीव्रतर होती चली जाती है। राजनीतिक परिप्रेक्ष्य की सबसे बड़ी विसंगति राजनीतिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार है। इसीको नये कहानीकार बड़ी ही आत्मीयता के साथ उकेरते हैं। जन-जन सेवा के आड़ में नेतागण किस तरह व्यवहार करते हैं, स्वार्थपूर्ति हेतु गुलछरे उड़ाते हैं, इसका स्पष्ट रूप नये कहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से चित्रित किया है। राजनीतिक क्षेत्र के जिन-जिन क्रियाकलापों ने मनुष्य के जीवन को प्रभावित किया है, उन सबका प्रभाव आधुनिक कहानी ने आत्मसात् किया है ।

समाज में भ्रष्टाचार की व्याप्ति और अधिक बढ़ गई हैं । इस संदर्भ में लिखने वाले कहानीकारों में फणीश्वरनाथरेणुठ, मन्नू भण्डारी, मोहन राकेश, कमलेश्वर, अमरकांत, भीष्म साहनी, मार्कण्डेय आदि प्रमुख हैं।

नये कहानीकारों ने राजनेताओं के भ्रष्ट आचरणों का ब्योरा अपनी कहानियों के माध्यम से दिया है। फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी "आत्मसाक्षी"[1] में कम्यूनिस्ट

कार्यकर्ताओं के माध्यम से किया हैं। गणपत एक सच्चा कम्यूनिस्ट कार्यकर्ता है। वह दिन-रात पार्टी के लिए जी-जान से मेहनत करता है। उसने समाज के हित हेतु अनेक अच्छे कार्य किये हैं। गणपत ने ही अपनी जान पर खेलकर जमीन्दारों के खिलाफ किसानों को संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया है। वह त्याग और निष्ठा का साक्षात् मूर्ति है । लेकिन उसको निस्वार्थ सेवा के बदले अपनी ही पार्टी के अन्य सदस्यों द्वारा धोखा दिया जाता है। पार्टी दो दुकड़ों में बंट जाती है और अन्य सदस्य उसे गद्दार करार करते हैं। गणपत पर कई इल्ज़ाम लगाया जाता है और उसे पार्टी से बरखास्त कर दिया जाता है। वह अपने ही साथियों के बरताव से आश्चर्यचकित है। उसकी मानसिक अवस्था का पता इन उद्गारों से लगाया जा सकता है कि परिवार, जाति, धर्म, समाज, सरकार और हर अन्याय, अत्याचार से हमेशा लड़ने वाला लड़ाकू गणपत आज अखाड़े में हारे हुए पहलवान की तरह पड़ा हुआ है। सभी उसकी पीठ पर एक लात लगाकर, गाली देकर चले जाते हैं ।....माँ-बाप , भाई-बहन, गाँव समाज और परबतिया से भी बढ़कर पार्टी और पार्टी के झंड़े से प्यार किया।"[2] गणपत को लगने लगता है कि दुनिया में हर एक चीज़ दो भागों में बंट रही हैं। मन्नू भण्डारी की कहानी 'मैं हार गई' में वर्तमान राजनीतिज्ञों पर जबरदस्त व्यंग्य है। इस कहानी के द्वारा लेखिका यह कहना चाहती है कि आज आदर्श समाजसेवी नेता की कल्पना करना ही बेकार है। हर एक समाजसेवी का मुख्य उद्देश्य अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए कोई न कोई मार्ग निकालना है। इस कहानी में लेखिका न तो वह ईमानदारी और कुशल नेता का निर्माण गरीब परिवार से कर पाती है और न ही अमीर युवक, उसके आधार पर बन पाता है। लेखिका यह स्वीकार करने को बाध्य है कि आज का नेता सुरा-सुन्दरी का सेवन करता है। वह भ्रष्ट है और किसी-न किसी रास्ते पर चलकर वह कुर्सी और सत्ता को हथियाना चाहता है।

मोहन राकेश की कहानी "परमात्मा का कुत्ता"[3] में स्वतंत्रता के बाद के भारत के सरकारी काम-काज में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा लालफीताशाही पर खुलकर व्यंग्य किया गया है । इस कहानी में स्वातंर्योत्तर काल के मोहभंग को दर्शाया गया है। कहानी में आज़ादी के साथ ही संभोग करनेवाले सरकारी कर्मचारी हैं। दफ्तर में कर्मचारी सरकारी कागज़ों पर दज़ल लिखकर अपने काम के वक्त अपने दोस्तों को सुनाकर अपने समय को गुज़रते हैं । इसी बात को एक अधेड़ उम्र के आदमी के मुँह से इस प्रकार बताया गया है कि "सरकार वक्तले रही है ? दस-पाँच साल में सरकार फैसला करेगी कि अर्जी मंजूर होनी चाहिए या नहीं । सालो, यमराज भी तो हमारा वक्तगिन रहा है । उधर वह वक्तपूरा होगा और इधर तुमको पता चलेगा कि हमारी अर्जी मंजूर हो गई है"[4] वह कह रहा है कि दो साल से अर्जी दे रखी है कि ज़मीन के नाम पर जो गड्ढा एलाट हुआ है उसके स्थान पर कोई दूसरी ज़मीन दे दी जायें । परन्तु इस दो साल की लम्बी अवधि में यह यह अर्जी केवल दो कमरे भी पार नहीं कर पाई है । वह गुस्से में बकता जाता है कि यहाँ सभी कुत्ते हैं। 'तुम सब के सब कुत्ते है।' वह कहता जाता है कि हम दोनों में फर्क इतना है कि तुम लोग सरकार के कुत्ते हो और हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और तुम लोग सरकार की तरफ से भौंकते हो। वह आदमी तो परमात्मा का कुत्ता है और वह उसी की दी हुई दुनिया में जीता है । वह परमात्मा की तरफ से भौंकता है। परमात्मा का घर तो इंसाफ का घर है जिसका वह रखवाली करता है । वह सरकारी कुत्तों से कहता है कि वे परमात्मा के इंसाफ को लूटते है। वह आदमी कहता है कि - "तुम पर भौंकना हमारा फर्ज है, मेरे मालिक का फरमान है । मेरा तुमसे असली बैर है। कुत्ते का कुत्ता बैरी होता है। तुम मेरे दुश्मन हो, मैं तुम्हारा दुश्मन हूँ। मैं अकेला हूँ , इसलिए तुम सब मिलकर मुझे मारो। मुझे यहाँ से निकाल दो । लेकिन मैं फिर भौंकता रहूँगा। तुम मेरा भौंकना बन्द नहीं कर सकते। मेरे अन्दर मालिक का नूर है, मेरे वाह गुरु का तेज़ है। मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौंकूँगा और भौं भौंककर तुम सबके कान फाड़ दूँगा। साले, आदमी के कुत्ते, जूठी हड्डी पर मरनेवाले कुत्ते, दुम हिला-हिलाकर जीनेवाले कुत्ते।....."[5] इस कहानी में मोहन राकेश ने सरकारी व्यवस्था के खोखलेपन, निष्क्रियता, घूसखोरी और अन्याय से ग्रस्त वातावरण और वातावरण को तोड़ने के लिए तड़पते हुए उपेक्षित आम आदमी का बड़ा ही सुन्दर और व्यंग्यात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। उँचे ओहदों में बैठे कर्मचारी अन्य लोगों की यानी आम आदमियों की तकलीफों को क्या जाने ? कमलेश्वर की कहानी "बेकार आदमी"[6] में सरकारी दफ्तरों में आसीन उच्च कर्मचारी के स्वार्थ का चित्रण मिलता है। सरकारी अफसर एक गरीब

आदमी को जिस प्रकार अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए इस्तेमाल करता है, इसी का जिक्र लेखक ने इस कहानी में किया है। वह अफ्सर बाल मनोविज्ञान पर एक किताब अंग्रेज़ी में लिख रहा है। तीन-चार लेख वह पूरा कर चुका है। वह प्रकाश यानी आम आदमी से इस संबंध में मदद माँगता है कि वह शेष लेख लिख कर दे। प्रकाश द्वारा अंग्रेज़ी में लिखने में कठिनाई के बारे में सुनकर वह कहता है कि- "तो आप क्यों मुसीबत उठाते हैं, आप हिन्दी में लिखिए, मैं अंग्रेज़ी अनुवाद कर दूँगा । आपके पास वक्त हो तो इन्हें ज़रा देखिए और कुछ बताइए.... आपकी मदद से ....मेरा मतलब है एक-दूसरे की मदद से हमें फायदा ही होगा।"[7] मोहन राकेश की एक और कहानी "क्लेम"[8] में भी सरकारी दफ्तरों में व्याप्त अफसरशाही का वर्णन किया गया है। शरणार्थी लोग सरकारी दफ्तरों का सौ-सौ बार चक्कर काटते है लेकिन कोई उन्हें नहीं पूछ्ता है। वे अपना काम भी नहीं निकाल पाते हैं। सरकारी अफ्सर लोगों की आवश्यकताओं को नहीं देखते बल्कि जीवित और मृत लोगों का हिसाब लगाते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सुखद जीवन का सपना जनता ने देखा है, वह सफल नहीं हो पाता है । जनता का मोहभंग हुआ है । इस अवस्था में नयी पीढ़ी अपनी मानसिक संतुलन खो बैठी है । अमरकांत की कहानी "हत्यारे"[9] में हीनता की भावना से ग्रस्त और विशिष्ट बनने की ललक से युक्तदो कॉलेज विद्यार्थियों को दर्शाया गया है । नेहरु का जिक्र करते हुए एक कहता है कि नेहरु ने उससे प्राइम मिनिस्ट्री संभालने को कहा है और उसने साफ-साफ मना कर दिया है और कह दिया कि उसके सामने बहुत बड़े-बड़े सवाल हैं जिसमें विश्वशांति को कायम करने की बात सर्वप्रथम है। वह अपने आप को विशिष्ट बनाने के प्रयास में आत्म प्रशंसा ही करता जा रहा है। वह कहता है कि उसके अमेरिका पहुँचने से अमेरिका के राजनीतिक नेता निश्चिन्त होकर रूस के साथ युद्ध के बारे में सोच सकते हैं । उसके इन बातों से केवल राजनैतिक अवस्था के प्रति आक्रोश ही ज़ाहिर होता है। ये दोनों युवक एक भेड़ियें की तरह एक वेश्या के शरीर को नोचकर, भरपूर उपभोग कर बिना पैसा दिये भाग जाते हैं। उस वेश्या के रुदन को सुनकर जो आदमी इन दोनों का पीछा करता है, उसपर चुरे से वार करके वे दोनों ही अंधेरे में गायब हो जाते हैं। देश की स्वतंत्रता के नाम पर जो स्वतंत्रता मिली है, उसी से युवा पीढ़ी में जो आक्रोश रुग्णता आई है, इसी का चित्रण इस कहानी में हुआ है। इस कहानी में लेखक ने स्वतंत्रता के पश्चात् युवा पीढ़ी की विघटित मनःस्थिति और कुण्ठा का उद्घाटन किया है। अमरकांत ने इस कहानी के माध्यम से यह बात स्पष्ट किया है कि जिस विसंगति से मुक्तिपाने के लिए देश की आज़ादी अनिवार्य मानी गई है और इसकी आवश्यकता को समझकर नेताओं ने जान देकर उसे हासिल किया है । देश की युवा पीढ़ी उसी विसंगति का शिकार बन गई है । मोहन राकेश की कहानी "एक ठहरा हुआ चाकू"[10] में स्वतंत्र भारत के जनजीवन में व्याप्त गुण्डागर्दी से उत्पन्न आतंक को उजागर किया गया है । स्वतंत्र भारत में आज़ादी की सुविधाएँ केवल कुछ ही ठेकेदारों को उपलब्ध हैं और वे इन सुविधाओं का नाज़ायज इस्तेमाल करते हैं। इन ठेकेदारों ने अपनी सुविधाओं की सुरक्षा के लिए गुण्डों को पाल रखा है और वे उनका संरक्षण करते हैं। स्वतंत्रता के बाद भारतीय राजनीति में गुण्डों का इस्तेमाल प्रायः होता रहता है। सामान्य जन इन गुण्डों की हरकतों की वज़ह से बिलकुल असुरक्षित महसूस करते हैं। वे संत्रस्त और अरक्षित ज़िन्दगी बिताने के लिए मज़बूर है। गुण्डा दुनिया भर के अपराध करते हैं और अधिकारी गण इन पर कोई कार्रवाई नहीं करके इन्हें प्रोत्साहित करते हैं। गुण्डे खुलेआम किसी पर भी वार करने की हिम्मत रखते है और अगर रपट भी कर दें तो गवाही देने के लिए कोई तैयार नहीं होता है क्योंकि सबको अपनी ज़िन्दगी प्यारी होती है। इसके अलावा उच्च अधिकारी इन गुण्डों को पनाह देते हैं। इस कहानी का पात्र भी इलाके के प्रसिद्ध गुण्डे नत्थासिंत्ह से प्रताडित है। वह अपने पत्रकार मित्र के दबाव में आकर पुलिस में रिपोर्ट लिखवाता है। उसे अपराधी को पहचानने के लिए थानेदार ने पुलिस स्टेशन बुलाया है। वह अपराधी भी शनाख्त करता है। परन्तु थानेदार द्वारा निडर रहने की बात को सुनकर भी वह थाने के बाहर जाते ही असुरक्षा के आतंक से सिहर उठता है। वह यह सोचता है कि वह इस इलाके में नहीं रह सकता है। वह इस बात को लेकर डर जाता है कि अगर उसे घर छोड़ देना पड़ेगा तो वह कहाँ जाकर रहेगा? लेखक ने इस कहानी में इस सत्य की ओर संकेत किया है कि सामाजिक असुरक्षा आज हमारे जीवन का अंग बन चुकी है।

राजनीतिक दलों की अवसरवादिता का स्पष्ट रूप स्वतंत्रता के बाद देखने को मिलता है । इसी रुप का चित्रण फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी "पुरानी कहानी : नया पाठ"[11] में हुआ । गाँववाले दोहरी विपत्ति से ग्रस्त हैं । दैवी विपत्ति बाढ़ के रूप में और मानवीय विपत्ति शोषण के रूप में सामने आती है । किन्तु यह दैवी विपत्ति वस्तुतः देवी विपत्ति नहीं है । राजनीतिक दल के वे लोग जो चुनाव में असफल रहे हैं "वे अब बाढ़ के समय जान-बूझकर बाँध को तुड़वा देते हैं और कहते हैं कि चूहों ने बाँध में असंख्य मांद खोलकर बाँध को जर्जर बना दिया है। रिलीफ कार्य के लिए सामान से भरी नावें डूब जाती है- पचास मन किरासन, दस बोरा आटा और चावल के साथ रिलीफ की नाव पनार नदी के बीच धारा में डूब गई।.....लापता हो गई।"[12] इस दुख और परेशानियों को लोग किसी-न-किसी प्रकार बर्दाश्त कर सकते है। इतना ही नहीं , बाढग्रस्त इलाकों की बहू-बेटियों पर कुदृष्टि डाली जाती है । यह स्थिति इन पीड़ित लोगों के लिए असह्य है । ऐसे भीषण परिस्थिति में भी पुरुष एक भेड़िये की तरह अपनी शिकार की खोज में है - ..... भीख माँगकर खाना अच्छा, मगर रिलीफ या हलवा-पूड़ी नहीं छूना । छिः छिः। वह 'कुर्र-अक्खा' भोलटियर मेरी सुगनी को फुसला रहा था, जानते हो ? .....सब चोरों का ठ्ठा"[13] बाढ़ पीड़ितों के नाम पर सबको अपनी जेब भरने का ख्याल रहता है । जन-सेवकों में यह प्रवृत्ति प्रकट है जिसका बहुत ही सुन्दर चित्रण 'रेणु' ने किया है । अधिकारी और जनसेवक किसी-न-किसी तरह अपनी मनौती पूरी करते हैं । राजनीतिक दलाल की अमानवीय अवसरवादिता का चित्रण भीष्म साहनी ने अपनी कहानी 'मौकापरस्त' में किया है । वे पैसे लेकर किसी भी दल का समर्थन कर देते हैं। राजनीतिक कार्यकर्ता अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए किसी भी शव का इस्तेमाल करते हैं। यह एक महत्वपूर्ण बात है कि ये कार्यकर्ता भावना के बहाव में आकर कोई भी काम नहीं करते हैं। उसके हर एक काम में योजना सुनियोजित होती है कि इस काम से उन्हें क्या फायदा होगा आदि का विस्तृत विश्लेषण के बाद ही वे उस काम को लेते हैं। इसी प्रकार मार्कण्डेय की कहानी आदर्श कुक्कुट गृह में राष्ट्रीय विकास , ग्राम सुधार आदि के नाम पर होनेवाले ढकोसलों का वर्णन मिलता है । राष्ट्रीय विकास खण्ड के अन्तर्गत गाँव के सुधार करने हेतु , गाँववालों की आर्थिक अवस्था में परिवर्तन लाने के लिए गाँव में आदर्श कुक्कुट गृह खोलने की योजना बनाई जाती है। उत्साहित गाँववाले अपने मुर्ग-मुर्गियाँ दे देते हैं। बी.डी.ओ, डिप्टी, कानूनगो, मैजिस्ट्रेट, तहसीलदार , जिला विकास अधिकारी जैसे बड़े-बड़े अफसर उपस्थित होते हैं। उद्घाटन के बाद जाते समय सभी लोग दो-दो एक-एक मुर्गी-मुर्गा लेते जाते हैं और आदर्श कुक्कुट गृह खाली हो जाता है । इस कहानी में ग्रामीण जनता पर दैवी प्रकोप, जमीन्दारों के शोषण के स्थान पर सरकारी शोषण को दर्शाया गया है।

गलत व्यवस्था के शिकार होते सामान्य व्यक्तिको कमलेश्वर ने अपनी कहानी "बयान"[14] में दर्शाया हैं। वह (नायक) एक सरकारी फोटोग्राफर है जो आज नहीं रहे, उन्होंने आत्महत्या कर ली है। वे अपने काम के प्रति काफी ईमानदार हैं। आत्महत्या की घटना के बाद उनकी पत्नी ही इन बातों का वर्णन करती हुई कहती है कि "जब वे सरकारी पत्रिका में खास तौर से जोड़ दिए गए, तो लहलहाती खेती, बांध , बिजलीघर, फैक्टरियाँ, मिलों, वन महोत्सवों, नई रेलवे लाइनों, पुल के उद्घाटनों, स्कूलों वगैरह की तस्वीर उतारते थे। वे बहुत खुश थे ।.....कहते थे- आज़ादी का यही सुख है। पर कई बरसों बाद उनका उत्साह पता नहीं कहाँ खो गया था । उनके दिल में कुछ घुमड़ता रहता था। एक बार बोले- इन तस्वीरों से कुछ हासिल नहीं होता।"[15] एक बार उन्हें (नायक) थार के रेगिस्तान को रोकने के संबंध में कुछ तस्वीरें को कहा जाता है । उनसे रेगिस्तान के स्थान में जंगल की तस्वीर खींचने को कहा जाता है। वे झूठी तस्वीरें नहीं खींच पाते हैं । विरोधी दल के किसी सदस्य ने उन तस्वीरों का हवाला देकर काफी मुसीबत खड़ी कर दी जिसके परिणामस्वरूप मंत्रीजी ने उन्हें हटा देने का आदेश दे दी है। इसी वजह से उसकी नौकरी चली जाती है। इस कहानी के माध्यम से लेखक ने इस ओर भी इशारा किया है कि आधुनिक भारत की परिस्थितियाँ व्यक्तित्व के अस्तित्व को आदमी को पंगु और नपुंसक बना देती है। कमलेश्वर की 'लाश' कहानी में भी राजनीतिक व्यवस्था के इस पक्ष को उभारा गया है कि सारी राजनीतिक व्यवस्था ने समस्त जीवन-मूल्यों की हत्या कर दी हैं । सभी सामान्य मनुष्य को लाश की स्थिति में लाने के दायित्व को कोई भी विपक्षी नेता उठाने को तैयार नहीं है । शासक वर्ग के भ्रष्टाचार का अंकन

मार्कण्डेय की कहानी "दोने की पत्तियाँ"[16] में किया गया है। प्रथम पंचवर्षीय योचना की समाप्ति पर दो लाख की धनराशि बच गयी है । एक नहर का काम शुरु होता है। जिस मार्ग से यह नहर बनाने की योजना बताई जाती है , इसमे कुछ संपन्न लोगों की ज़मीन आती है। संपन्न लोग राजनीति का उपयोग करके और रिश्वत देकर अपना काम निकाल लेते है। गरीब आदमी इस भ्रष्ट-व्यवस्था की चपेट में आ जाता है। नहर बनती है और पैसेवाले सरकारी सिफारिश पर और पैसे के बल पर अपने खेतों को नहर में जाने से बचा लेते हैं। आखिरकार नहर को मोड़ दिया जाता है गरीबों की ज़मीन की ओर। इस कहानी का पात्र भोला का खेत उस नहर के मार्ग में आ जाता है। वह इंजीनियर को मारने जाता है लेकिन उसे बख्श देता है और भागने की स्थिति में होकर भी वह नहीं भागता है क्योंकि वह कहाँ की ओर भागे ? उसकी ज़मीन तो नहर में जा चुकी है । वह पुलिस की हिरासत में चोरी के इल्ज़ाम लिए ज़िन्दगी काटता है।

निष्कर्षतः नई कहानी अपने समय की राजनीतिक गतिविधियों से बेखबर नहीं अपितु वह उससे पूरी तरह से जुड़ी हुई है। आज कहानीकार की प्रतिबद्धता समाज से हैं। इसमें इसी भ्रष्ट-धोखेबाज़ घोटालेबाज़ राजनीतिक परिवेश का यथार्थवादी चित्रण इन कहानियों में पाते हैं। राजनीति राजनेताओं के चुनाव अभियान, वैभव-ऐश्वर्य, भोगविलास, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचारी आदि का खुला-चिट्टा इन कहानियों की विशेषता है। इस दौर के कहानीकार की संवेदना की, राजनीतिक जीवन की भ्रष्टता, छल और अनेक राजनीतिक विचारधाराएँ पूर्णतः प्रभावित करती हैं। हिन्दी कहानी अपनी समसामयिकता में ही जीवन-संदर्भों से जुड़कर युगबोध-सम्मत स्वरूप ग्रहण कर लेती है।

संदर्भ ग्रन्थः-

1. फणीश्वरनाथ रेणु आत्मसाक्षी- प्रतिनिधि कहानियाँ पृ-90, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992
2. फणीश्वरनाथ रेणु आत्मसाक्षी-प्रतिनिधि कहानियाँ पृ-99
3. मोहन राकेश- परमात्मा का कुत्ता- मेरी प्रिय कहानियाँ-पृ-53,राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली,1992
4. वही- पृ-55
5. वही- पृ-56-57
6. कमलेश्वर- बेकार आदमी- कस्बे का आदमी- पृ 104, शब्दकार, दिल्ली,1995
7. वही- 109
8. मोहन राकेश क्लेम- मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियाँ पृ-108, राजपाल एण्ड सन्ज़,दिल्ली, 1996
9. अमरकांत- हत्यारे- प्रतिनिधि कहानियाँ पृ- 105, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994
10. मोहन राकेश- एक ठहरा हुआ चाकू- मेरी प्रिय कहानियाँ-पृ-73, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, 1992
11. फणीश्वरनाथ रेणु -पुरानी कहानी? नया पाठ प्रतिनिधि कहानियाँ पृ-80, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992
12. वही- पृ-89
13. वही- पृ-88
14. कमलेश्वर- बयान- मेरी प्रिय कहानियाँ- पृ-57, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, , 1995
15. वही- पृ-60
16. मार्कण्डेय- दोने की पत्तियाँ-हंसा जाई अकेला- पृ-33, नया साहित्य प्रकाशन, इलाहाबाद, 1985

असोसिएट प्रोफेसर
महाराजास कॉलेज(सरकारी स्वायत्त), एरणाकुलम , केरल

कविता

गरज बावली

डॉ.बाबू.जे

देखने से ही मन में कविता
पैदा करती फुलवारियाँ जो थीं,
सब इस वक्त पैदा करतीं मुझमें
ऊब की तरंगें औ' असंख्य चोटें;
मैंने देखा था अभी तक जो कुछ
सब आँसू और दर्द थे, सुना था
जो कुछ सब आहें न चीखें थीं।
इस धरती में ज़िंदा रहने का
विज्ञान तक मिटाके निकल
जाने का मन होता ऐसे क्षणों मैं
अब प्रश्न उठता, फिर में
लिखती क्यों? जवाब एक ही
है पास कि गरज बावली होती।

मोबाईल : 9447020924

संत्रस्त पात्रों का चित्रण उषा प्रियंवदा की कहानियों में

डॉ.लेखा.पी

उषाप्रियंवदा की अधिकांश कहानियाँ प्रायः आधुनिक कहानियों के अन्तर्गत रखी जा सकती हैं। उनकी कहानियाँ जीवन के यथार्थ से संबन्धित और केन्द्रित हैं। उनकी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन स्तर के परिवारों का सामाजिक एवं आर्थिक घरातल विद्यमान है। साथ ही मध्यवर्गीय समाज की टूटती आर्थिक - पारिवारिक स्थिति भी विद्यमान है। उनकी कहानियों में मनोविज्ञान का प्रभाव देख सकता है। कई तरह से संत्रस्त पात्र उनकी कहानियों में चित्रित हैं। संत्रास के कई रूप हैं, रुग्णता जन्य संत्रास, मनःस्तापी संत्रास, अतीत के संत्रास, उच्चवर्गीय संत्रास, अनिश्चित जीवन का संत्रास आदि।

ऋणताजन्य संत्रास से संत्रस्त पात्र : उषाजी ने ऋण मानसिकता को लेकर जीनेवाली नारियों का चित्रण कहानियों में किया है। चाँद चलता रहा कहानी में रोहिणी की रोगग्रस्त मानसिकता के जरिए लेखिका ने स्त्री-पुरुष संबन्धों के सन्दर्भ में नारी मनोविज्ञान को उभारा है। इस कहानी में रोहिणी शर्मा अपने मंगेतर की शारीरिक संबंध करने की इच्छा को नैतिक भय के कारण ठुकराती है और दो दिन के बाद अरविंद की मृत्यु होने पर रोहिणी पर जबरदस्त सदमा पहुँचता है। परिणाम स्वरूप रोहिणी कई पुरुषों की अंकशायिनी बनकर रहती है। रोहिणी की ज़िंदगी को संवारने के लिए विनय के आने पर भी वह अपनी दाग भरी ज़िंदगी को किसी पर थोप देना नहीं चाहती।

रुग्ण मानसिकतावाली एक पात्र है 'प्रतिध्वनियाँ' कहानी की वसु। वसु वैवाहिक जीवन को नागपाश मानती है और पति एवं बेटी को छोड़कर स्वतंत्र जीवन बिताती है और परपुरुष संबंध भी रखती है। वसु अपने अतीत की ओर जाना चाहती है फिर भी असफल हो जाती है। डॉ. साधना जी के अनुसार "वसु एक अतिआधुनिक स्वतंत्र प्रकृतिवाली स्त्री है। उसके विचार में विवाह एक मीनिंगलेस रस्म के अलावा और कुछ नहीं है।"[1] 'टूटे हुए' कहानी की तंत्री अपनी संतति को लेकर रुग्ण मानसिकता की स्थिति पर है। पति के प्रति अलगाव की भावना और मानसिक कशमकश आदि के कारण वह अपने पति के शोधछात्र भास्कर की ओर आकर्षित होती है। 'टूटे हुए' कहानी के बारे में निर्मला जैन की राय समीचीन लगती है - उषा की वे कहानियों समय के उस दौर की रचनाएँ हैं जब बौद्धिकों के मानस पर अस्तित्वबादी सोच हावी था। आत्मनिष्ठ अपने चुने हुए रास्तों में जीवन का अर्थ तलाशते हुए, स्व-आर्जित पीडा को ढोते हुए अस्तित्ववादी मुहावरे में अपराधबोध को वहन करते पात्रों से इन कहानियों में पाठकों का सामना होता है। उचित - अनुचित, सही - गलत, नैतिक - अनैतिक के बारे में उनकी अपनी समझ है, जिसे कालान्वित करते हुए उनके मन में परंपरागत मूल्य और मान्यताएँ आड़े नही आती। मसला प्रायः वही होता है - स्त्री पुरुष संबंधो का, दो के बीच किसी अन्य के आ जाने को गिनती में वह तीसरा, चौथा, पाँचवाँ कोई भी किसी भी पक्ष में हो सकता है।"[2] टूटे हुए में धन-संपत्ति होने पर भी तंत्री मानसिक व्यवथा से ग्रस्त है।

'नींद' की नायिका भी रुग्ण मानसिकता का शिकार है। इसका कारण उसका अकेलापन, भय आदि है। अंधेरी रात की एकांतता से वह डरती है। मानसिक रोग की चिकित्सा के लिए एक मनोविद है, लेकिन वह उस मनोविद की बातों को नहीं मानती। क्योंकि उसका विचार है कि उसे कोई रोग नहीं है। साधना अग्रवाल की राय में "उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में नारी जाति को अलग दृष्टि से देखा है तथा पाश्चात्य देशों में नारी किस तरह का जीवन यापन करती है, इस विषय पर विशद विचार किया है।"[3] 'नींद' की नायिका का विचार है कि उसकी समस्याओं का हल दवा के द्वारा कर सकता है।

मनस्तापी - संत्रास से संत्रस्त पात्र : चाँद चलता रहा कहानी की रोहिणी मनस्तापी संत्रास से संत्रस्त पात्र है। अपने मंगेतर की मृत्यु दुर्घटना के कारण होने पर भी रोहिणी ने सोचा कि उसका उत्तरदायी रोहिणी ही है। मृत्यु के दो दिन पूर्व अरविंद ने रोहिणी के साथ शारीरिक संबंध की इच्छा प्रकट करने पर रोहिणी ने इनकार किया था। यही चिंता रोहिणी को अपराध की तरह सालती रही और इससे

मुक्तहोने के लिए प्रायश्चित रूप में उसने कई पुरुषों के साथ संबंध स्थापित कर अपने मन के दाग को दूर करने की कोशिश की। "हर बार मैं जब किसी की शय्या पर सोती हूँ मेरा एक अंश मर जाता है।"[4] यहाँ रोहिणी मानसिक ग्रंथि से पीड़ित है।

अतीत के संत्रास से संत्रस्त पात्र : 'सागर पार का संगीत' की देवयानी का पति कैनडियन है। वह अपने पति के साथ रहने पर भी अतीत की चिंता उसे हमेशा संत्रस्त करती रही। भारत में अपने मंगेतर प्रकाश, पिता आदि की चिंता उसे उदासी बनाती है। सब कुछ तोड़कर जाना वह चाहती थी। अपने कैनडियन पति ओस्कर के प्रति उसके मन में दोहरी भावना है। उसके प्रति मन में जितना प्यार है, अंतर्मन में उतना वैर भी है। क्योंकि उसके पूरे अतीत को काट देने का जिम्मेदार वह पति को मानती है। 'संबंध' की श्यामला भी सुनीता की आत्महत्या के कारण संत्रस्त रहती है। इस प्रकार दृष्टि दोष की चंद्रा, वापसी की गजाधर भी अतीत के संत्रास से ग्रस्त पात्र है।

उच्चवर्गीय संत्रास से संत्रस्त पात्र : 'दृष्टिदोष' कहानी की चंद्रा उच्चवर्गीय संत्रास से संत्रस्त पात्र है। चंद्रा के पिता उच्चपदाधिकारी एवं धनी परिवार के सदस्य थे। चंद्रा की शादी एक मध्यवर्गीय भारतीय युवा साम्ब से हुई जो आई.ए.एस नौकरी देखकर चंद्रा की शादी उससे करायी थी। साम्ब का परिवार बहुत साधारण-सा था। डॉ. विजया वारद के अनुसार "चंद्रा अपने मैके के संस्कारों से बाहर आकर ससुराल वाले के साथ तक कि पति के साथ भी सुख से जी नहीं सकी हैं।"[5] पिता की धन - संपत्ति एवं पाश्चात्य के प्रभाव के कारण चंद्रा उच्चवर्गीय संत्रास का शिकार हो गई है।

अनिश्चित जीवन का संत्रास : आर्थिक एवं बेरोज़गारी की वजह से अनिश्चित जीवन का संत्रास ज़िंदगी और गुलाब के फूल के सुबोध में उभरा है। सुबोध की बेकारी के कारण घर में उसकी दशा बहुत शोचनीय हो गयी। माँ एवं बहन की उपेक्षा का पात्र बन गया। प्रेमिका शोभा दूसरी जगह होती है। नौकरी चले जाने के बाद सुबोध को ऐसा लगा कि अम्मा का प्यार - दुलार वृंदा की समझदारी सब एक षड्यंत्र के हिस्से है "…. काम … न धंधा, तब भी यह नहीं होता कि ठीक वक्त पर खाना खा ले तुम कब तक जाडे में बैठोगी माँ, उठकर रख दो, अपने आप खा लेंगे।"[6] बहन वृन्दा की इस कथन से बेकार सुबोध के प्रति उसकी निन्दा प्रकट है। नौकरी चले जाने पर, बेकार होने पर सब सुबोध के खिलाफ हो गये और उसकी ज़िंदगी भी अनिश्चितता में पड़ गयी।

निब्कर्षतः कहा जा सकता है कि उषा प्रियंबदा की कहानियों में कई तरह के कथापात्र विद्यमान है। उनकी कहानियों के कथानक एवं पात्रों का चित्रण मनोविश्लेषण के आधार पर निर्मित हुए है। चाँद… चलता रहा, प्रतिध्वनियाँ आदि के पात्र रुग्ण मानसिकतावाले हैं। इसीप्रकार 'टूटे हुए' और 'नींद' कहानी की नायिकायें भी रुग्ण मानसिकता के शिकार हैं। 'सागर पार के संगीत' की नायिका देवयानी अतीत के संत्रास से ग्रस्त है तो दृष्टिदोष की चंद्रा उच्चवर्गीय - संत्रास से ग्रस्त है। उषाजी की कहानियों में कुंठित पात्र, पीडित पात्र, संत्रस्त पात्र आदि विभिन्न धरातल के पात्र सम्मेलित हैं। उनकी भाषा एवं शैली भी मनोविश्लेषणात्मक ही है।

संदर्भ सूची

1) साधना अग्रवाल - वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन - पृ. 76

2) निर्मला जैन - कथा समय में तीन हमसफर - पृ. 88

3) साधना अग्रवाल - वर्तमान हिन्दी महिला कथालेखन और दाम्पत्य जीवन - पृ.214

4) उषा प्रियंवदा - चाँद चलता रहा - संपूर्ण कहानियाँ - पृ.155

5) डॉ. विजया वारद - साठोतरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ - पृ.103

6) उषा प्रियंवदा- ज़िन्दगी और गुलाब के फूल - संपूर्ण कहानियाँ - पृ.137

असोसियेट प्रोफसर
हिंदी विभाग
पष़्शीराजा एन.एस.एस. कॉलेज
मट्टनूर, कण्णूर

मृदुला गर्ग की कहानियों में नारी विमर्श

डॉ. षेर्लिन

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नारी जीवन में बहुत परिवर्तन आया है । आज नारी अपने अधिकारों से वंचित नहीं है । पुरुष प्रधान समाज में नारी एक हद तक पुरुष के साथ कदम पर कदम मिलाते हुए चली आ रही है । घर से बाहर वह अपने अस्तित्व और अधिकारों के लिए लड़कर जीत भी हासिल कर चुकी है लेकिन घर पहुँचते ही वह त्यागशील माँ,पत्नी, बेटी का रूप धारण कर लेती है ।परिवार की हँसी खुशी और समाधान के लिए उसे बहुत कुछ समझौता करना पड़ता है। त्याग करना पड़ता है। इस जद्दोजहद से बाहर निकलने का प्रयास आधुनिक नारी कर रही है। मृदुला गर्ग ने अपनी कहानियों में नारी के विविध रूपों का चित्रण किया है। उनकी कहानियों में भारतीय स्त्री की संपूर्ण गाथाएं - सुख-दुख, हर्ष- विषाद, मान-अपमान और अपेक्षा-उपेक्षा आदि का चित्रण है।साथ ही नारी की जटिल मानसिकता और अस्मिता का संघर्ष भी दिखाया है ।

मृदुला गर्ग की कहानी 'हरी बिंदी' की नायिका अतिथि स्वतंत्रता चाहती है। एक दिन जब उसका पति राजन दिल्ली चला जाता है तब वह अपनी मर्जी से जीती है ।सुबह आराम से उठती है । नौकर को छुट्टी दे देती है । वह सोचती है- "ओह, सुबह देर तक सोने में कितना आनंद आता है। राजन होता तो सुबह छह साढे छह से ही खटर - पटर शुरू हो जाती है। चाय नाश्ते की तैयारी, दोपहर का खाना साथ में और आठ बजे राजन दफ्तर के लिए रुखसत न जाने राजन को जल्दी उठने की क्या मर्ज है।"[1] अतिथि आराम से उठती है,मनपसंद तरीके से सजती है । नीले रंग का कुर्ता चूड़ीदार के साथ वह हरी बिंदी लगाती है। तब वह सोचती है - "राजन होता तो कहता -नीले पर हरा क्या तुक है।"2 बात-बात पर तर्क करना विमर्श करना अतिथि को अच्छा नहीं लगता था ।सज धजकर वह टैक्सी पकड़ती है और निकल पड़ती है जहांगीर आर्ट गैलरी की ओर। फिर फिल्म देखने जाती है। थिएटर में उसे एक साथी मिलता है । चाय कॉफी पीकर वापस आती हैं। आते वक्तवह अपरिचित अतिथि की हरी बिंदी का तारीफ करते हुए कहता है- "मैंने आज से पहले किसी को हरी बिंदी लगाए नहीं देखा।"[3] इस प्रकार इस कहानी की नायिका स्वतंत्रता चाहती है ।वह बिना किसी बंधन के जीना चाहती हैं ।

मृदुला गर्ग की कहानी 'वितृष्णा' में लेखिका ने एक नारी के विद्रोह की भावना को व्यक्तकिया है ।दिनेश अपनी पत्नी शालिनी से बहुत बातें करना चाहता है। प्यार जताना चाहता है । लेकिन शालिनी की ओर से नीरसता ही दिखाई देती है। दाम्पत्य जीवन के आरंभिक दिनों में शालिनी दिलीप से बातें करना चाहती थी ।दिलीप के साथ वक्तबिताना चाहती थी। लेकिन उस समय दिलीप के पास समय नहीं था। आज रिटायर होने के बाद दिलीप जब शालिनी से बात करना चाहता है तब शालिनी चुप्पी साधती है। दिलीप पूछना चाहता है - "बीस साल पहले तुम्हें इतना कुछ कहना था,उसका क्या हुआ? कहाँ खो गए वे शब्द? बिना कहे तुम्हारा मन कैसे भर गया? तब मैं कितना व्यस्त था। तुमने मुझसे पूछा था, आपके पास घंटे भर की फुर्सत नहीं है कि बैठकर बात कर सके तो मैंने कहा था, बात करने की फुर्सत उन्हें होती है जिनके पास काम नहीं होता। अगर तुम घर को पूरे सलीके से चलाओ तो तुम्हारे पास भी चख चख करने को वक्तन बचे.. । तुम समझती क्यों नहीं, शालिनी, तब मेरे पास वक्तनहीं था।अब है। हालात बदलते रहते हैं। हालात के साथ हमें बदलना पड़ता है। देखो, घर में हम दो ही प्राणी हैं। एक बेटा है सो अमेरिका जा बसा। लौटकर क्या आएगा। अब जो कुछ कहना है हमें एक दूसरे से कहना है । इस तरह चुप्पी साधे रहने से जिंदगी कैसे चलेगी।"[4] दिलीप बार-बार अपनी बात कहना चाहता

है । लेकिन बोल नहीं पाता ।शालिनी की चुप्पी सिर्फ दिलीप से थी और किसी से नहीं। एक दिन दिलीप देखता है शालिनी अपनी बहन मंगला से हँस बोल रही थी। दिलीप के आते ही फिर चुप हो गई। दिलीप शालिनी का ध्यान आकर्षित करने कई हरकतें करता है। एक दिन वह कहता है कि दाल में कंकड है। इतना सुनते ही शालिनी बिना कुछ कहे दाल की कटोरी को लेकर कूड़ेदान में उडेल देती हैं और चुपचाप चली जाती है ।इस कहानी में शालिनी और दिनेश के दाम्पत्य जीवन में फैले तनाव ने उनकी जिंदगी को बेस्वाद और उबाउ बना दिया। इस कहानी की नायिका शालिनी किसी भी तरह के समझौते के लिए तैयार नहीं है ।

मृदुला गर्ग की एक छोटी सी कहानी है - अगर यों होता। इस कहानी की नायिका मधुर कुछ पल के लिए अपने रास्ते से भटक जाती है। लेकिन जल्दी ही अपने पति और बच्चे कीऔर लौट आती है। उसे जिम से प्यार जरूर होता है लेकिन एक आदर्श पत्नी और माँ की तरह वह अपने कर्तव्य पथ पर आ जाती है। लेखिका ने इस कहानी की नायिका को एक आदर्श पत्नी और माँ के रूप में चित्रित किया है।

'तुक' कहानी की नायिका मीरा अपने पति के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित है। वह उसकी खुशी के लिए सब कुछ करने को तैयार हो जाती है ।वह गाड़ी चलाना सीखती है ,नरेश के पसंदीदा खेल ब्रिज सीखती है, क्लब जाती हैं । फिर भी नरेश में कोई बदलाव नहीं आता। उसकी ओर से अवहेलना ही मिलती है। मीरा कहती है - "एक मैं ही हूँ जो पति के दफ्तर से घर लौटने पर उसके चेहरे से अपनी निगाहें हटा नहीं पाती। एक मैं ही हूँ जो प्याले में केतली से चाय डालते हुए या नमकीन की प्लेट उसकी तरफ बढ़ते हुए उसके चेहरे पर आ रहे हर भाव को पढ़ने की कोशिश करती हूँ नतीजा यह होता है कि कभी मैं चाय छलका देती हूँ ,तो कभी नमकीन छिटका देती हूँ । इस पर उसके माथे पर शिकन उभर आती है ,मैं भीतर ही भीतर मार लेती हूँ एक मैं ही हूं बस और कोई औरत यह बेवकूफी नहीं करती।"[5] मीरा जानती है कि नरेश उसकी अवहेलना कर रहा है फिर भी वह अपने आप को नरेश को काबिल बनाने की भरसक कोशिश करती है। और जब वह असफल होती है तो वह अपने आप को कोसती है और कहती है- "मैं इस युग में मिसफिट हूँ । मैं जानती हूँ मैं उसे ऐसे ही प्यार करती रहूँगी।"[6] प्रस्तुत कहानी में पति को परमेश्वर मानने वाली स्त्री का चित्रण हुआ है ।

'मेरा' कहानी में मीता का चित्रण एक बोल्ड नारी के रूप में हुआ है ।अमेरिका जाने की तैयारी में जब उसके पति महेंद्र को पता चलता है कि मीता माँ बनने वाली है तो वह मीता से बच्चे को गिरा देने को कहता है ।तब मीता चीख उठती है और कहती है -तुम जाओ अभी फौरन अमेरिका चले जाओ। तुम हत्यारे हो अभी नहीं तो बाद में मार डालोगे मेरे बच्चे को। महेंद्र और उसके घरवाले भी बच्चे गिराने की बात ही सोचते हैं। महेंद्र एक हद तक मीता को अपने आर्थिक अवस्था का बयान करके अबॉर्शन के लिए राजी भी करवा लेता है। लेकिन अस्पताल पहुँचकर वह डॉक्टर और महेंद्र से डटकर कहती है - यह मेरा निजी मामला है। वह अबॉर्शन करवाने से मुकर जाती है और बच्चे की परवरिश के लिए एक अच्छी नौकरी की तलाश में निकल पड़ती है ।

खरीदार कहानी की नायिका नीना अपनी बलबूते पर सब कुछ हासिल कर लेती है। दिखने में कम आकर्षक होने के कारण नीना की माँ नीना की शादी दहेज देकर करवाना चाहती है। लेकिन वह मना कर देती है। नीना सोचती है - "जितना खराब माल उतना महंगा इश्तिहार । जिंदगी खुद एक इश्तिहार बनकर रह गई है। पूरी दुनिया दो गुटों में बंटी है - दुकानदार और खरीददार । ठीक है, मैं भी खरीदार बनूँगी उसने तय किया। विक्रेता नहीं खरीदार।"[7] नीना आइ ए एस की परीक्षा पास कर ऊँचे ओहदे पर पहुँच जाती है। नीना का प्रेमी सुनील जब एक बार शादी न करने का कारण पूछता है तब वह पूछती है - "तुम तो ऐसे पूछ

रहे हो जैसे कोई कहे, आज खाना क्यों नहीं खाया? यह कोई अनिवार्य क्रिया है?"[8] इस कहानी में मृदुला गर्ग ने विवाह रूपी संस्था को नकारा है । महादेवी वर्मा ने ठीक ही कहा है- "विवाह एक ऐसी संस्था है जिसमें आज भी दास प्रथा जीवित है।"[9] नीना जिन्दगी में सब कुछ हासिल कर लेती है - "आज उसके पास सब कुछ है । गाड़ी है ,बंगला है ,नौकर चाकर है ,क्लब की सदस्यता है , सभा समारोह के निमंत्रण है। सफलता का अपना एक रूप होता है, वह भी उसके पास है । उसकी चाल में आत्मनिर्भरता है ,आवाज में रौब और चेहरे पर प्रभावशाली व्यक्तित्व की छाप ।सबसे बड़ी बात यह है कि वह जानती हैं कि उसके कुछ कहने पर लोगों को झुकना होगा, ध्यान देना होगा ,उसकी ओर देखना होगा। चाहे दफ्तर हो चाहे बैठक। उसके पास सब कुछ है और जो नहीं है कभी भी ले सकती है।"[10] प्रस्तुत कहानी के जरिए लेखिका ने नारी शिक्षा पर ज्यादा बल दिया है। नीना शिक्षा के द्वारा पुरुष प्रधान समाज में पुरु ष को मात कर आदर और सम्मान प्राप्त करती है।

मृदुला गर्ग की कहानी साहित्य की अधिकांश नारी पात्र चाहे उच्च वर्गीय हो, मध्यवर्गीय हो ,या निम्न वर्गीय सारे पात्र अपने स्वतंत्र अस्तित्व बनाना चाहती हैं। पुरुष प्रधान समाज में , स्त्री से किसी के सामने सिर झुकाये बिना सीना तानकर जीने का एलान भी मृदुला गर्ग ने अपनी कहानियों में किया है।

संदर्भ सूची

1-संपूर्ण कहानी - मृदुला गर्ग - पृ. सं.16
2 वही पृ. 16
3- वही पृ. 19
4- वही पृ - 351
5 - वही पृ -252
6- वही पृ -259
7- वही पृ -269
8- वही पृ -267
9 शृंखला की कड़ियाँ - महादेवी वर्मा - पृष्ठ 9
10 संपूर्ण कहानी -मृदुला गर्ग - पृष्ठ -272 - 273

सह आचार्य, हिंदी विभाग
सरकारी संस्कृत विद्यालय, तिरुवनंतपुरम

आपकी बात

आदरणीय संपादक महोदय,

पावन स्वदेश के दक्षिणी अंचल की इस अनुपम पत्रिका ने राष्ट्रभाषा हिंदी का जो प्रकाश फैलाया है, वह अभिनंदनीय है। पत्रिका में प्रकाशित लेख, कवितायें तथा हिंदी साहित्य से संबंधित ज्ञानवर्द्धक प्रश्नोत्तर, पुस्तक समीक्षा पत्रिका के निरंतर बढ़ते हुए स्तर के परिचायक हैं। पत्रिका में बहुत पहले मेरी कवितायें, मेरी पुस्तक पर समीक्षा प्रकाशित हुई थी। इस अंतराल से मुझे खेद है। पत्रिका के मुख्य पृष्ठ पर कीर्तिमान महान व्यक्तित्व का चित्र प्रकाशित किया जाता है उसका देश हितैषी लोकसेवी कृतित्व हमारे जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है। पत्रिका के इस कुशल संपादन के लिए हार्दिक बधाई देते हुए उसकी निरंतर प्रगति की शुभ कामना करता हूँ।

विनयावनत

डॉ. सीताराम गुप्ता 'दिनेश'
गढ़ी परिसर आलमपुर, जिला भिण्ड
मध्य प्रदेश - 477 449

'पट्टिनत्तार' (काव्य)

अनुवादक : प्रो.डी. तंकप्पन नायर **मूल : पी. रविकुमार**

(7) जन्म और अंत

मनुष्य-शरीर की उत्पत्ति,
परिणाम, वृद्धि-क्षय,
और मृत्यु के बारे में
गाता है पट्टिनत्तारः
एक सुंदर युवति एवं युवक
मधुर सुखदायक प्रणय में
एक होकर स्वयं भूल जाते हैं
उस विस्मृति में
युवक के शरीर से
बहा वीर्य
युवति के रक्त में मिश्रित होता है।
उसमें करीब एक हिमबिंदु के
आधे भाग की एक छोटी बूँद
युवति के गर्भपात्र में प्रवेश कर
अंड से मिलकर
एक कमल कली का रूप पाती है।
बाद में वह
कूर्म की आकृति पाकर
नेत्र, देह, मुँह
कान, पैर, हाथ
यों
सारे अवयव बने।
वे प्राण सहित बढ़ने को आवश्यक
दस महीने का काल पूरा होता है।
माँ के उदर से
शिशु भूमि में जन्म लेता है।
अभिभावक
मुहूर्त वार और तिथि की
गणना कर लेते हैं
माँ और बंधुजन स्त्रियाँ
कपड़े के पालने में शिशु को लिटाकर
लोरी गाकर सुलाती हैं।
रूई सदृश नन्हे पैरों को
जमीन पर मृदुलता से रखता हुआ
धीमे ऊपर को होने का प्रयास करता हुआ
और टेढ़ा-मेढा होता हुआ
कुछ दिन बाद
खुद उलटता हुआ
माँ का अमृतसदृश
स्तनपान करता हुआ
छोटी छोटी जानकारियाँ पाती हुई
शिशु बढ़ता है।
चमकते दाँत दिखाता हँसता
और लार से गीले अधरों को देखकर
स्त्रियाँ लालसा से
शिशु को चूमती हैं
शिशु घुटनों के बल पर
रेंगता हुआ उनकी गोदी में बैठता है :
अस्पष्ट भाषा में कुछ बोलता है।
रत्नखचित सुवर्ण करधनी से शोभित
और चमकीला वस्त्र पहनता हुआ
बुजुर्गों के साथ बैठकर
भोजन करता हुआ
गली में बैठकर मिट्टी लेकर खेलता हुआ
बच्चों के साथ दौड़ता हुआ
और पैदल चलता हुआ
पाँचवें साल की उम्र में प्रवेश करता है।
ज्ञानी गुरु का
उपदेश स्वीकार कर,
ग्रंथों का गहरा अध्ययन करके
करता है ज्ञानार्जन।
दीखते सब लोगों की प्रशंसा
पाने योग्य
वृद्धि होते चंद्रमा की भाँति
सुंदर कहलाया और
बढ़ता-बढ़ता करता है प्रवेश
सोलहवें साल में।
उस युवक के अतुल्य सौंदर्य से
आकृष्ट होकर,
सुंदरियों ने
बड़ी लालसा के साथ
सोचा मन में कि
यह मन्मथ स्वरूप है।

अपनी मादक निगाहों से
उसको मोहित करती हैं।
मोरनियों की भाँति
उन सुंदरियों को
मंद मंद चलते देखकर
वह उनके पीछे चलता है।
उन्हें सीने से लगाकर
आलिंगन करता है।
उनके साथ रति-क्रीडायें करता है
मुश्किल से प्राप्त
अपना सारा धन
वह उनको दे देता है।
आरक्षित निधि घर और संपत्ति
उन मोहिनियों को दे डालता है।
सबकुछ भूलकर
काम-क्रीडाओं में डूबता है।
उसके सौंदर्य यौवन और
स्वास्थ्य का क्षय होता है।
दाँत झड़ते हैं
आँखें धुंधली पड़ती हैं
बुढ़ापे के कारण
झुर्रियाँ हुई हैं
बाल सफेद हुए हैं,
साथ ही वातग्रस्त भी
जिन्हें भी देखता उन सबसे
बोलता है गुस्सा होकर।
हमेशा एक लाठी टेकता हुआ
बड़े आयास के साथ चलता है।
टेढ़ी पीठवाले एक बूढ़े
बंदर की तरह
झुक-झुककर चलता है।
बुद्धि का क्षय होता है
और कान नहीं सुनता
सदा समय कुछ न कुछ
बड़बड़ाता रहता है।
नींद बिलकुल नहीं आती
और कभी हल्की नींद आती
और आँख बंद करता
तो गले में कफ़ उलझकर
खाँसने लगता है
खाँसते- खाँसते
साँस न मिलने की स्थिति होती है
गला और सीना
बिलकुल सूख जाते हैं
अनजाने में पहनी धोती खुल जाती है
यह देखकर बच्चे परिहास करते हैं।
खुद अनजाने
अचानक
मल और मूत्र बहकर
शरीर से और पैर से
नीचे बहता है
घबराहट में
पूरा मन धुंधला जाता है
और अंधेरा छा जाता है
कुछ कहने की असमर्थता में
विचार और मन शिथिल हो
झपक जाता है
झपकी से जागकर
सिर से पाँव तक टूटकर
शरीर का सारा बल
क्षय होता है और यह बात
मन में बैठ जाती है
कि आगे मेरा कोई
सहारा नहीं है
और धरती में मेरा जीवन
समाप्त हो रहा है।
अंतिम अभिलाषा कह नहीं पाता
कोई शब्द बाहर नहीं निकलता
सब अस्तव्यस्त हो जाता है
इशारे से भी सूचित नहीं कर पाता।
संतानों ने जो पसावन
मुँह में उँडेला वह भीतर न जा पाकर
बाहर बहता है।
भूत ओझल हुए
साँस बंद हुई,
हृदय का स्पंदन समाप्त होता है।
यमदूत कालपाश के साथ पहुँचते हैं
पुत्र
शव के पास
बैठकर रोये
पत्नी शव पर गिर कर रोयी।
पडोसी आये
बुजुर्गों ने
शवदाह के बारे में सोचा
कुछ लोगों ने
शव को नहलाकर साफ़ किया।
सफ़ेद कपड़े से ओढ़ा
फूलों की माला से सजाया
सुगंध द्रव्य छिटकाया;
चंदन से लेप किया
दुर्गंध निकलते शरीर को सजाया
पुत्र
शव को कंधे पर उठाकर
श्मशान में पहुँचे।
'यही तो मानव जीवन है'
ऐसा सोचकर,
मनोव्यथा से
लकडियों को क्रम से रखा।
उसके ऊपर शव को लिटाया
भूसे और गीली मिट्टी के
मिश्रण से
शव को ढ़क लिया
चिता पर आग जलायी
शव जलकर
माँस कटकर गिरा।
चर्बी पिघलकर
अस्थियाँ जलकर
कोयला बनी
आग धीरे-धीरे बुझी
ओह मेरा शिव!
मुझे आशीर्वाद दें!

(8) फाँसी का तख्ता जलता है

उज्जयिनी
नित्यसाक्षी होकर
महाकाल
रात्रि की नीरवता में
क्षिप्रा नदी।
गाँव की सीमा के
पीपल के पेड़ की छाया में
गणपति की बड़ी मूर्ति-
गणपति के सामने
पट्टिनत्तार
अंधकार में
शिव के ध्यान में बैठा था
धुंधली चाँदनी में
केवल गणपति
अव्यक्त दीखता है।
चोरों ने आकर

गणपति के सामने
खड़े होकर
प्रार्थना की!
"हे भगवान! हमें
आशीर्वाद दें!"
चाँदनी
अस्त हो चुकी थी
अंधकार मिटने के पहले
चोर लौट आये।
गणपति
अंधकार में डूबा था
गणपति के सामने
चोर हाथ जोडकर खडे हुए
"हे भगवान! आपने हमें आशीर्वाद
दिया!"
असीम कृतज्ञता से
अत्यंत आह्लाद से
चोरों ने
एक रत्नमाला
चढावे के रूप में
गणपति के गले की तरफ़
फेंक दी।
नवरत्नमाला
पट्टिनत्तार के
गले में आ गिरी।
चोरों का आना
उनकी प्रार्थना करना
गणपति के गले की तरफ़
नवरत्नमाला को
फेंक देना
और माला का अपने गले में
गिरना और
चोरों का चला जाना
आदि कुछ भी
पट्टिनत्तार ने जाना नहीं!
पट्टिनत्तार तो
अंधकार में
शिव के
ध्यान में था।
गणपति के सामने
गले में नवरत्नमाला सहित
शिव का ध्यान कर रहे
पट्टिनत्तार को
राजा के सैनिकों ने पकड लिया
और राजा भद्रगिरि के
सामने पेश किया।
राजा भद्रगिरिः
"हमारे अंतपुर को
लूटनेवाला तू है कौन?"
पट्टिनत्तार कुछ नहीं बोला
सिर्फ ज़रा मुस्कराया।
"तू चुप क्यों है?
संन्यासी का रूप धारण कर
क्या लूटना है तेरा पेशा?"
तब भी
पट्टिनत्तार कुछ नहीं बोला
सिर्फ जरा मुस्कुराया
"क्या तू
हमारा परिहास कर रहा है?
इस पक्के चोर को
फौरन ले जाकर
फाँसी के तख्ते पर चढ़ाओ
तब भी
पट्टिनत्तार कुछ नहीं बोला
सिर्फ जरा मुस्कराया।
शांत होकर
निश्शब्द होकर
निस्संग होकर
वध्यभूमि की ओर
चल रहा पट्टिनत्तार
राजा भद्रगिरि के
मन का
शिकार करने लगा था।
फाँसी के तख्ते को देखकर
पट्टिनत्तार ने गाया :
"हे शिव!
तुझे मैं जानता हूँ।
अपना काम कहने को
अब कुछ भी नहीं है।
मैं जानता हूँ कि
सब कुछ तू कराता है।
इस जन्म में
मैंने कोई भी पाप
नहीं किया है।
यह क्या
पूर्वजन्म में कर डाले
किसी दुष्कर्म का
फल है?
मैं कुछ नहीं जानता
हे शिव!
सबकुछ तेरे ही काम हैं।"
पट्टिनत्तार के शब्द
ज्वलित हुए -
वह आग बनकर
फाँसी के तख्ते पर
फैली -
फाँसी का तख्ता जल गया।
राजा भद्रगिरि
पट्टिनत्तार के पैरों पर
गिर कर
फट-फूटकर रोया
"मुझ घोर पापी को
महाज्ञानी आप को
माफ़ी देनी चाहिए।
राजमहल सत्ता
और राज्य सब
मैं छोड़ देता हूँ।
इस निमिष से
आपका विनम्र
शिष्य हूँ।
मेरे गुरुदेव!
कृपया मुझे स्वीकार करें
आगे
मुझे क्या करना है?"
पट्टिनत्तार ने गाया :
"हे भद्रगरि!
जान लें कि
ज्ञात और अज्ञात
समस्त लोकों का
कारण एक ईश्वर है।
जान लें कि वह एक है
सारे सुख-भोग
सत्ता और राज्य
अस्थिर है, नश्वर है।
भूखों का चेहरा देख लें -
उनसे अनुकंपा प्रकट करें
चाहे प्राण छोड़ना पडें
धर्म व स्नेह को
बिलकुल न छोड़ें!
सिर्फ ईश्वर का
निश्चय ही चलेगा!"
(क्रमशः)

प्रश्नोत्तरी

डॉ. रंजीत रविशैलम

1. 'उपनिवेश में स्त्री' किसकी आलोचनात्मक कृति है?
2. 'कोहबर की शर्त' किसके द्वारा रचित आँचलिक उपन्यास है?
3. 'तोडो कारा तोडो' किसपर केंद्रित रचना है?
4. 'दखिनी' गद्य की प्रथम पुस्तक कौन सी है?
5. 'उक्ति व्यक्ति प्रकरण' किस प्रकार की रचना है?
6. नौवें रस के रूप में शांतरस की अवधारणा किसने की?
7. 'दशरूपक' किसकी रचना है?
8. 'कवि और पाठक की चित्तवृत्तियों का एक ताल एक लय हो जाना ही साधारणीकरण है'- किसने कहा है?
9. "कविता कल्पना कानन की रानी है" किसने कहा है?
10. किस पाश्चात्य विद्वान ने कल्पना पर सर्वाधिक विचार किया है?
11. 'ओम जय जगदीश हरे'- किसकी प्रसिद्ध कविता है?
12. 'स्वच्छंदतावाद का घोषणापत्र' किसे माना जाता है?
13. महादेवी वर्माजी का पहला काव्य संग्रह कौन-सा है?
14. नई कविता को छायावाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया किसने कहा है?
15. रज्जब के गुरु कौन थे?
16. सूफी काव्य परंपरा में प्रथम कृति किसे मानी जाती है?
17. सिद्धों की संख्या कितनी मानी जाती है?
18. 'साहित्य का समाजशास्त्र और रूपवाद' किसकी आलोचनात्मक रचना है?
19. 'कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है।- किसकी उक्ति है?
20. 'आल्ह-खंड' कहानी किसकी रचना है?

उत्तर

1. प्रभा खेतान
2. केशव प्रसाद मिश्र
3. विवेकानंद
4. मेराजुल अशकीन
5. व्याकरण
6. जगन्नाथ
7. धनंजय
8. आचार्य रामचंद्र शुक्ल
9. निराला
10. कालरिज
11. श्रद्धाराम फिल्लौरी
12. 'पल्लव' की भूमिका
13. नीहार
14. डॉ.नगेंद्र
15. दादू दयाल
16. चंदायन
17. 84
18. बच्चन सिंह
19. धूमिल
20. गोविंद मिश्र

दीर्घकाल की सेवा के बाद सेवामुक्त अध्यापिका श्रीमती सतीदेवी का विदाई समारोह

अक्षर हिंदी कॉलेज के वार्षिक सम्मेलन में
रॉंक विजेताओं को पुरस्कार वितरण करते हैं।

नन्नियोड पंचायत की अध्यक्ष श्रीमति शैलजा सजीवन मंत्री
को शाल पहनाकर सम्मान करती है।

RNI No. 7942/1966
Date of Publication :15-04-2024
Date of posting : 20th of Every month

KERAL JYOTI

APRIL 2024

Vol. No. 61, Issue No.01
Regn. No. KL/TV(S) 381/2022-2024
Price Rs. 25/-

A monthly Publication of Kerala Hindi Prachar Sabha approved for School Libraries by the Education Dept., Govt. of Kerala as per notification No. B-3 / 4036/83 SIE dated 20-9-1985
Approved by University of Kerala as per order No. Ac. A II / 1 / 31965 / Std. Journals/2013 / dtd : 27-6-2013

आदर्श विद्यालय के सालाना समारोह में छात्रों द्वारा आयोजित विविध कला दृश्य

केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 के लिए मंत्री अ.व.डॉ.मधु बी द्वारा प्रकाशित, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवननंतपुरम-695014 में मुद्रित, प्रो.डी.तंकप्पन नायर व डॉ.रंजीत रविशैलम द्वारा संपादित

Published by the Secretary, Adv. Dr. B. Madhu for Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014
Printed at Rashtravani Mudranalaya, Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014 & edited by Prof.D.Thankappan Nair & Dr.Renjith Ravisailam